अध्याय : षष्ठम

18वीं एवं 19वीं सदी का संक्रमणकालीन मेवाड़

(मेवाड़–मराठा संघर्ष)

18वीं सदी[1] में महाराणा अरिसिंह, महाराणा हम्मीर सिंह, महाराणा भीमसिंह के शासनकाल में शाह मोतीराम बोल्या, मेहता अगरचन्द, ठाकुर अमरचन्द बड़वा, मेहता दीपचन्द तथा महाराणा भीमसिंह, जवानसिंह, सरदारसिंह तथा स्वरूपसिंह के राज्य काल में सोमचन्द गाँधी तथा मेहता रामसिंह, मेहता शेरसिंह, महाराणा शम्भूसिंह, सज्जनसिंह के शासन काल में तथा महाराणा फतहसिंह के समय मेहता राय पन्नालाल मेवाड़ प्रशासन में प्रधान पद पर रहे हैं। इसी प्रकार राणा जगतसिंह द्वितीय व राणा राजसिंह द्वितीय के समय कोठारी चतुर्भुज, राणा स्वरूपसिंह व शम्भूसिंह के काल में कोठारी केसरीसिंह, राणा सज्जनसिंह के समय में कोठारी बलवन्त सिंह राज्य के प्रधान थे।[2]

राणा संग्रामसिंह द्वितीय[3] के समय कोठारी भीमजी फौजबक्शी, मेहता सांवलदास राणा अरिसिंह के समय शाह मोतीराम बोल्या, मेहता अगरचन्द, राणा भीमसिंह के समय मेहता भालदास, मोजीराम बोल्या, सोमचन्द गांधी, मेहता देवीचन्द, राणा स्वरूपसिंह के समय मेहता लक्ष्मीलाल आदि सफल सेनानायक थे।[4]

राज्य के शिलालेख लिखवाने, संस्कृत में ग्रंथों का लेखन, पत्राचार, संधिदूत तथा राजनयिक कार्यों में पाणेरी, भट्ट मेवाड़ा, पालीवाल, दशोरा (पुरोहित), बड़वा इत्यादि ब्राह्मण जातियों के लोगों को नियुक्त किया जाता था।

6.0 ठाकुर अमरचन्द बड़वा का योगदान (सन् 1751 ई. से 1775 ई.) –

सनाढ्य जाति में राणा अमरसिंह के प्रधान अमरचन्द बड़वा का परिवार राणा जगतसिंह द्वितीय से राणा भीमसिंह तक राज्य में विभिन्न प्रशासनिक पदों पर सेवार्थ नियुक्त थे। अमरचन्द का पिता शम्भूनाथ, जगतसिंह द्वितीय के समय रसोडे का हाकिम था। राणा प्रताप द्वितीय ने अमरचन्द बड़वा को ठाकुर का पद व ताजिम प्रदान कर राज्य का परामर्शदाता बनाया। उसका लड़का लालशंकर राणा हम्मीर व भीमसिंह के समय उच्च पद पर था।[5]

राणा शम्भूसिंह के काल में पुरोहित श्यामनाथ, सुन्दरनाथ राज्य की रिजेन्सी कॉन्सील के सदस्य व मुसाहिब थे। राणा सज्जनसिंह के समय बड़वा परिवार के पदमनाथ इजलास खास के सदस्य रहे थे।[6]

महाराणा जगतसिंह द्वितीय के समय मेवाड़ दरबार में सामन्तों के गृह कलह के कारण कुंवर प्रतापसिंह को कैदखाने में डाल रखा था, परन्तु 5 जून 1751 में जगतसिंह के देहान्त होने से जिन दरबारियों ने कुंवर प्रतापसिंह को जेलखाने से निकाल कर उन्हें गद्दी पर बिठाया उनमें अमर चन्द बड़वा की अहम् भूमिका थी। अतः कृतज्ञता प्रकट कर महाराणा बनते ही उसने अमरचन्द बड़वा को ठाकुर की पदवी व ताजीम देकर अपना प्रमुख सलाहकार नियुक्त किया था।

मेवाड़ के राजदरबार में सामन्तों के परस्पर मतभेद व महाराणा के साथ उनके सम्बन्धों में कटुता के कारण राज्य में एक योग्य प्रधानमंत्री के रूप में अमरचन्द बडवा की प्रशासनिक दक्षता व उसकी स्वामीभक्ति जैसे

गुणों वाला व्यक्ति मिलने से शासन में सुधार का एक नया युग प्रारम्भ हुआ।

पेशवा बाजीराव प्रथम साम्राज्यवादी था।[7] उसने मालवा, गुजरात व राजपूताने पर भीषण आक्रमण कर यहाँ से भारी धन सम्पदा लूट कर अपनी शक्ति बढ़ाई। 18वीं सदी में आंग्ल–मराठा युद्धों के परिणामस्वरूप अंग्रेजों ने होल्कर सिंधिया को परास्त कर सन् 1806 में दिल्ली के युद्ध में मुगल सम्राट शाहआलम को परास्त कर उसके साथ सन्धि कर उसे पेंशन भोगी बनाकर सहायक सन्धि के तहत अपने अधीन किया। जहाँ तक मेवाड़ एवं शेष राजपूताना के राज्यों का सम्बन्ध है मेवाड़–मारवाड़, मेवाड़–आमेर, मेवाड़–मराठों में परस्पर संघर्ष हुआ। इस तरह अमरसिंह प्रथम के पश्चात् मुगलों के क्षत–विक्षत व छिन्न भिन्न प्रदेशों को मराठा साम्राज्य में विलिन करने के उद्देश्य से चौथ व सरदेशमुखी जैसे भारी करारोपण कर विस्तारवादी नीति अपनायी। इस कारण राजपूताना के अन्य राज्यों की तरह मेवाड़ में भी सामन्तों व शासकों के सम्बन्धों में परिवर्तन हुआ। 18वीं सदी मुगल दरबार में सामन्तों की दलबन्दी से कमजोर हुआ। मुगल दरबार की दलबन्दी विभिन्न जातिय गुटों के कारण थी, यथा इरानी–दुर्रानी, मुगल–पठान, तुर्की–मुस्लिम व शिया–सुन्नी, हिन्दू–मुस्लिम इत्यादि। मेवाड़ में भी सामन्तों में दलबन्दी व आन्तरिक गृह युद्ध होने लगा, इससे मराठों व पिण्डारियों तथा अंत में अंग्रेजों को लाभ मिला।

इस अवधि में मेवाड़ मराठों, पठानों व पिण्डरियों के आक्रमण लूटपाट व अराजकता के दौरा–दौर में एक संक्रमणकाल में था।[8] होल्कर व सिन्धियों ने मेवाड़ में जिस प्रकार लूटपाट व आतंक पैदा किया उसे देखते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री ठाकुर अमरचन्द बड़वा व उसके अन्य सहयोगी शाह मोतीराम बोलिया को प्रशासन में सर्वोच्च पद देकर मेवाड़

को बाह्य आक्रमणों से सुरक्षित रखने की कार्यवाही हुई। इसी अवधि में चुण्डावतों व शक्तावतों के बीच प्रतिस्पर्धा राज दरबार में गुटबन्दी व महाराणा का पक्षपातपूर्ण व्यवहार से राज्य में अराजकता उत्पन्न हुई।[9]

मेवाड़ महाराणा अरिसिंह द्वितीय के क्रोधी स्वभाव से उसके सरदार अप्रसन्न थे। इसका लाभ उठाकर मल्हार राव होल्कर ने मेवाड पर पेशवा के आदेश से खिराज वसूलने हेतु ससैन्य आक्रमण करते हुए वह उदयपुर में ऊँटाले तक आ पहुँचा।[10] राज्य के असंतुष्ट कुराबड़ रावत अर्जुनसिंह ने धायभाई रूपा को होल्कर के पास भेजकर मराठा से मुक्ति पाने का प्रयत्न करने लगा। महाराणा ने अपने ही विश्वासपात्र स्वामीभक्त ठाकुर अमरचन्द बड़वा को मुसाहब (मुख्य सलाहकार) के पद से हटाकर महता अगरचन्द बच्छावत को अपना सलाहकार बनाया व अमरचन्द बड़वा के पद पर बसन्तराय पंचोली को पदभार सौंप दिया। फलतः विश्वासपात्र सरदार उदयपुर छोड़कर चले गये। राज्य की आर्थिक स्थिति के साथ ही सैन्य शक्ति दुर्बल हो गयी। इसके उपरान्त भी महाराणा अरिसिंह अपने सामन्तों, मंत्रियों, प्रमुख सलाहकारों का सहयोग लेने में असफल रहा। अतः उसने सिन्ध व गुजरात से सेना भर्ती कर उन्हें राज्य में नियुक्ति दे दी।[11]

तत्कालीन अभिलेखों से स्पष्ट होता है कि मराठों के मेवाड़ पर आक्रमणों का मुकाबला करने हेतु सन्धि सेना भर्ती करने व बड़वा अमर चन्द जैसे राज्य हितैषी को पद से हटाने से राज्य में शक्तावतों व चूण्डावतों में परस्पर वैमनस्य बढ़ गया। असंतुष्ट सामन्तों ने महाराणा के विरूद्ध विद्रोह कर दिया। एक दल ने अरिसिंह को अपदस्थ कर स्वर्गीय राणा राजसिंह द्वितीय के पुत्र रतनसिंह को महाराणा बनाने का यत्न किया। इस वक्त मेवाड़ राज्य उदयपुर, भीलवाड़ा व चित्तौड़ तक ही सीमित हो गया। दूसरी तरफ राज्य के दूसरे दल का नेता देवगढ़ का रावत

जसवन्तसिंह था, जिसने मराठों की सहायता लेने हेतु अपने पुत्र राघवदेव को ग्वालियर में माधवराव सिन्धिया के पास भेजा। सिन्धिया ने सवा करोड रूपये लेना स्वीकार कर उसे सहायता देने का वचन दिया। उधर महाराणा ने कोटा के झाला जालिम सिंह व अगर चन्द मेहता को पेशवा के पास सहायतार्थ भेजा परन्तु रतनसिंह के पक्षधरों से सिन्धिया को भारी धन मिलने के लालच से उसने मेवाड़ की राजधानी उदयपुर पर आक्रमण किये। इसी अवधि में उदयपुर में पठान सेना ने वेतन नहीं मिलने से राजमहल का घेरा डाल दिया। रतनसिंह को महाराणा बनाने व अरिसिंह को अपदस्थ करने के विषय में मेवाड़ का एक प्रकार से विभाजन सा हो गया। फलतः रतनसिंह कुम्भलगढ़ में महाराणा बन बैठा, दूसरा स्वयं राणा उदयपुर में। उज्जैन के पास क्षिप्रा में राजपूत सेना एवं मराठों में भीषण युद्ध हुआ जिसमें 15000 नागा साधुओं की फौज जयपुर से सिन्धिया के पक्ष में लड़ी। मेवाड़ के इस संक्रमणकालीन समय में राज्य के संकट मोचक ठाकुर अमर चन्द बड़वा को पुनः प्रधानमंत्री के पद पर नियुक्त किया गया।[12]

महाराणा अरिसिंह के हाथों लिखे परवानों[13] से ज्ञात होता है कि ठाकुर अमरचन्द बड़वा को कुछ समय महत्वपूर्ण प्रधान पद संभले ही हटाया हो किन्तु अरिसिंह महाराणा ने अपने परवानों में स्पष्ट आदेश दिया था कि आप याने शाह मोतीराम बोलिया, ठाकुर अमरचन्द बड़वा व उसके आदमी जैसा कहे वैसे राज्य की देखरेख करो। मोतीराम बोलिया को लिखे पत्र में यह भी लिखा कि आप पर मुझे पूरा भरोसा है। इससे स्पष्ट होता है कि अरिसिंह जी ने ठाकुर अमरचन्द बड़वा की राज्य भक्ति व निष्ठा का सम्मान किया।

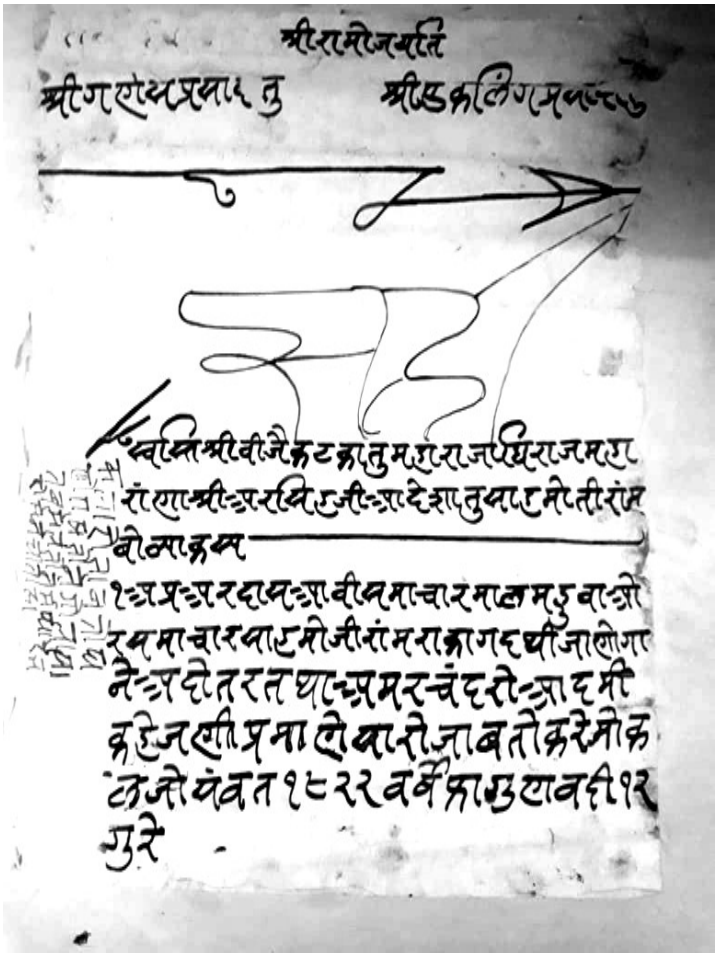

स्वस्ति श्री विजैकटकातु महाराजाधिराज महाराणा जी श्री अरिसिंह जी आदेशातु साह मोतीराम बोल्या कस्य अप्रपरदास आदीस समाचार मालम हुवा और समाचार साह मोजी रामरा कागद थी जाणोगा ने अदोतरथा, अमरचन्द रो आदमी कहे जणी प्रमाणे सारो जाबतो करे मोकल जो संवत् 1822 वर्षे फागुण वदी 12 ग्रहे

(इस पत्र में अरिसिंह जी महाराणा का शाह मोतीराम बोल्या को प्रेषित पत्र जो उसके भाई मोजीराम बोल्या को प्रेषित को निर्देशित कर आज्ञा दी गयी है कि प्रधानमंत्री ठाकुर अमरचन्द बड़वा के आदमियों के कहे अनुसार कुम्भलगढ़ किले के प्रबन्ध व गढ़ घाणेराव की रक्षा का प्रबन्ध करने का उल्लेख मिलता है।)

''कला रो जाब तो घणोरा षत जो न गो लातब मे लता नरम धारण सेन चातीसा''

उक्त पत्र में कुम्भलगढ़ किले और घाणेराव सैन्य क्षेत्र की सुरक्षा प्रबन्धन का आदेश दिया गया है।

इस पराजय का समाचार सुनकर महाराणा अपनी सैनिक शक्ति के कम हो जाने से अत्यधिक घबराया। उसके सहायक सरदारों में सलूम्बर का भीमसिंह (पहाड़सिंह का उत्तराधिकारी) कुराबड़ का रावत अर्जुनसिंह और बदनोर का ठाकुर अक्षयराज ही रह गये थे। सरदारों ने उत्साह दिलाने पर महाराणा ने सिंध तथा गुजरात से और मुसलमान सैनिकों को बुलाकर युद्ध की तैयारी शुरू की। शहरपनाह के चारों ओर छोटे–छोटे किले बनवाकर शहर के कोट दरवाजे व खाई को ठीक किया। दुश्मन भंजन तोप को एकलिंग गढ पर चढ़ाया। महाराणा की आर्थिक अवस्था अत्यधिक खराब थी, इसलिए वह समय पर मुसलमान सैनिकों को वेतन न दे सका, जिससे वे बहुत बिगड़े। महाराणा इस आन्तरिक उपद्रव से बहुत डरा और रावत भीमसिंह की सलाह से उसने अमरचन्द बड़वा को इस विकट स्थिति को संभालने के लिए प्रधान बनाया। अमरचन्द ने कहा मैं स्पष्ट वक्ता और मिजाज का तेज हूं। मैंने पहले भी जब–जब काम किया है तब तब पूरे अधिकार के साथ ही। आप किसी की नेकसलाह मानते नहीं।

संधि होने पर सिंधिया तो रुपये लेकर लौट गया, परन्तु रत्नसिंह मन्दसौर में न गया और न उसके साथी सरदारों ने उसका पक्ष छोड़ा। देवगढ़ के राघवदेव, भीण्डर के मुहकमसिंह वगैरह विद्रोही सरदारों ने फिर महापुरुषों (नागों) के बड़े भारी सैन्य को एकत्रित कर मेवाड़ पर चढ़ाई की

और महाराणा के सरदारों को धमकियां देना व गांवों को लूटना प्रारम्भ किया। महाराणा भी यह खबर सुनते ही रावत भीमसिंह और अर्जुनसिंह को उदयपुर की रक्षार्थ छोड़कर ससैन्य चल पड़ा और देलवाड़ा होता हुआ जीलोला गांव में पहुंचा। महापुरुषों की सेना मोकरूंदा गांव में ठहरी हुई थी। टोपला गांव में टोपल मगरी के पास मुकाबला हुआ। महाराणा की सेना में महाराणा के काका बाघसिंह और अर्जुनसिंह, महत्ता अगरचन्द बड़वा अमरचन्द, पंवार राव शुभकरण, रावत प्रतापसिंह (आमेट का), रावत फतहसिंह (कोठारिये का), शिवसिंह (रूपाहेली का), अक्षयसिंह का (छोटा वाला), सूरजमल (नारलाई का), शेरसिंह (खोड़वाला), छत्रसिंह (बसी का) शम्भूसिंह (सनवाड़ का), शक्तिसिंह (खैराबाद का), सूरतसिंह (महुवा का), धीरतसिंह (हमीरगढ़ का), चतुरसिंह (बनेड़िये का), नाथसिंह (थांबले का), मोहकम सिंह (गाडरमाले का), ईशरदास (दौलतगढ़ का), गजसिंह (लसाणी का), नाथसिंह (जीलोला का), उम्मेदसिंह (कोसीथल का), गजसिंह (लसाणी का), जवानसिंह (रूंद का), सूरजमल (सिंयाड़ का) तथा कई सिन्धी अफसर थे। युद्ध में दोनों पक्ष बड़ी वीरतापूर्वक लड़े। अन्त में विद्रोहियों की सेना भाग निकली। महाराणा विजय प्राप्त कर उदयपुर लौटा। इस युद्ध से रत्नसिंह की ताकत बिल्कुल कम हो गई।

6.1 महाराणा हम्मीरसिंह द्वितीय एवं अमरचन्द बड़वा –

महाराणा हम्मीरसिंह के बालक होने के कारण राजमाता ने शासन प्रबन्ध अपनी इच्छानुसार कराना चाहा और उसके लिए उसने शक्तावत सरदारों को अपनी ओर मिलाना प्रारम्भ किया। शनैः शनैः उनकी सहायता से उसका प्रभाव इतना बढ़ गया कि उसकी दासियों का भी हौंसला बहुत बढ़ गया, जिससे वे किसी को कुछ नहीं समझती थी। एक दिन उसकी कृपापात्री गुजर जाति की दासी रामप्यारी[14], जो बहुत वाचाल और घमंडी

थी, अमरचन्द से कुछ बुरी तरह पेश आई, जिस पर स्पष्टवक्ता अमरचन्द ने भी क्रोधावेश में उसे 'कहा' की रांड कह दिया। रामप्यारी ने इस बात को बढ़ाकर राजमाता से उसकी शिकायत की। वह इस पर अत्यधिक क्रुद्ध हुई और अमरचन्द को दूर करने के लिए सलूम्बर के रावत भीमसिंह से सहायता मांगी। अमरचन्द पहले से ही यह सोचकर अपने घर गया और अपना कुल जेवर व असवाब छकड़ों में भरवाकर उसने जनानी ड्योढ़ी पर भिजवा दिया तथा वहां जाकर कहा – 'मेरा कर्तव्य तो आप और आपके पुत्रों का हितचिन्तन करना है, चाहे उसमें कितनी ही बाधाएं क्यों न उपस्थित हो। आपको तो यह चाहिए था कि मुझसे विरोध करने की अपेक्षा मेरी सहायता करती', परन्तु वह तो राज्याधिकार को अपने हाथ में रखना चाहती थी और अपनी दासियों आदि के हाथ का खिलौना बन जाने के कारण योग्यायोग्य का विचार न कर उसने अमरचन्द को विष दिलाने का प्रपंच रचा और उसी के परिणामस्वरूप कुछ दिनों बाद उसकी मृत्यु हो गई। उस समय उसके घर में से कफन के लिए भी पैसा न निकला, जिससे उसकी उत्तर क्रिया राज्य की तरफ से हुई।

ठाकुर अमरचन्द बड़वा[15] ने बहुत विकट स्थिति में निःस्वार्थ बुद्धि और देशहित की प्रेरणा से राज्य का कार्य बहुत योग्यतापूर्वक चलाकर देश को आने वाली कई आपत्तियों से बचाया था। उसका बिना किसी अपराध के विषपान प्रयोग से प्राणान्त होना मेवाड़ के इतिहास को कलंकित करता है। कर्नल टॉड ने उसके विषय में जो प्रशंसात्मक वाक्य लिखे हैं, ठाकुर अमरचन्द के समग्र जीवन एवं उसके उज्जव कार्यों का सही मूल्यांकन है।

6.2 मेवाड़ पर मराठा आक्रमण और सत्ता की राजनीति –

जब मेवाड़ के शासकों की सैन्य शक्ति नष्ट हो गई, तो राज्य में गृह युद्ध और विद्रोह भड़क उठा। इनमें युद्धरत दो प्रमुख उप–कुल, शक्तावत और चुण्डावत थे। पठानों और पिंडारियों (अनियमित सैन्य लुटेरियों) के वर्चस्व वाली मराठा सेनाऐं मेवाड़ को उजाड़ती रहीं। तब महादजी सिंधिया (महादजी शिंदे रा. 1730–94 ग्वालियर रियासत के संस्थापक) ने एक अनुशासित सेना का गठन किया, जिसमें उत्तर भारतीय सैनिक और गोरों (अंग्रेजों) का नेतृत्व था। मराठों के करीबी सहयोगी अमीर खान के पठानों ने सिंधिया की मौत के बाद मेवाड़ में अपने विनाश के बीज बो दिए। विदेशी भाड़े के आतंकवादियों को काम पर रखने के बावजूद, मराठों को अपने उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हुई, क्योंकि इन पठानों और पिंडारियों ने मराठों को तहस–नहस कर दिया।

देश के पतन का असर अंग्रेजों पर पड़ा, जिनके साथ मेवाड़ ने शांति संधि पर हस्ताक्षर किए थे। चुण्डावतों के शक्तिशाली गुट ने अपने ही महाराणा अरि सिंह द्वितीय (1761–73) को पद से हटाने की योजना बनाई। गोगुंदा के प्रमुख की बेटी तथा स्वर्गीय महाराणा राज सिंह द्वितीय के कथित पुत्र रतन सिंह की ताजपोशी कुम्भलगढ़ में हुई और उन्होंने महादजी सिंधिया को पुरस्कार देने के वादे के साथ उनकी सहायता का न्यौता दिया।

''सन् 1751 में महाराणा प्रताप सिंह द्वितीय मेवाड़ के उत्तराधिकारी बने। इस राजा के इतिहास में, अपने तीन साल के शासन काल में मराठा आक्रमण एवं युद्धों के अलावा कुछ और दर्ज नहीं है। इन के बाद इनके पुत्र महाराणा राज सिंह द्वितीय आए जिन्होंने अपने पूर्वजों के नाम एवं पद

के अलावा कुछ और नहीं पाया। उनके सात साल के शासन काल में मराठा समुदाय ने लगभग सात बार चढ़ाई की और मेवाड़ साम्राज्य को क्षीण कर दिया।''

सन् 1761 में महाराणा अरि सिंह द्वितीय ने प्रधान का पद अमरचंद बड़वा से लेकर जसवंतराय पंचोली को सौंपा एवं मेहता अगरचंद को विशिष्ट सलाहकार के रूप में नियुक्त किया। इस कारण से पूर्व प्रधान अमरचंद बड़वा अलगाव महसूस करने लगे। जसवंतराय पंचोली, मेहता अगरचंद एवं अन्य महत्वपूर्ण निष्ठावान लोगों ने महाराणा अरि सिंह द्वितीय को राजकीय समस्याऐं समझाने का बहुत प्रयास किया लेकिन क्रोधी राजा ने किसी भी सलाह पर ध्यान नहीं दिया। महाराणा के निर्देशानुसार सन् 1767 में निराश प्रधान जसवंतराय पंचोली ने त्यागपत्र दिया और महाराणा ने पद मेहता अगरचंद को सौंपा। जालिम सिंह (शाहपुरा के राज उम्मेद सिंह के छोटे पुत्र) महाराणा के सलाहकार बने रहे।

मेहता अगरचंद एक साफ दिल व्यक्ति की तरह जाने गए। उन्होंने अपने कर्त्तव्यों के पालन को प्राथमिकता दी। मेवाड़ के छोटे सरदारों के विरूद्ध कई वर्षों तक चले गृह युद्ध में उन्होंने अपने राजा की विजय के लिए अथक प्रयास किए। सन् 1762 से 1765 तक जब माण्डलगढ़ का किला अनौपचारिक रूप से छोटे सरदारों के कब्जे में था और सिर्फ चार गाँव खालसा (राज्य भूमि) के अन्तर्गत थे। राज्य सलाहकार के पद पर रहते हुए मेहता अगरचंद मेवाड़ के लिए यह किला पुनः जीतना चाहते थे। उन्होंने छोटे सरदारों पर चढ़ाई की और माण्डलगढ़ को मेवाड़ के लिए हासिल करने में सफल हुए। सन् 1765 में राज्य के प्रति सेवा एवं निष्ठा के फलस्वरूप हुए मेहता अगरचंद को माण्डलगढ़ का 'किलेदार' नियुक्त किया गया। मेहता अगरचंद अपने परिवार के साथ माण्डलगढ़ किले में

स्थापित हुए और तभी से सन् 1947 में भारत की स्वतन्त्रता तक बच्छावत मेहताओं के परिवार किले में रहते आए हैं और किलेदारी पद का गौरव उठाते आए हैं।

सन् 1767 में जब राज्य अशांति से गुजर रहा था तब मेहता पृथ्वीराज के पुत्र मेहता अगरचंद (ज. 1735–1799) की महाराणा अरि सिंह द्वितीय द्वारा प्रधान पद पर नियुक्ति की गयी एवं जागीर सौंपी गयी। सन् 1769 के असफल उज्जैन युद्ध के पश्चात् अमरचंद बड़वा को पुनः बुलाकर प्रधान के पद पर नियुक्त किया गया।

6.3 मेवाड़ पर मराठा–पिण्डारी आक्रमण एवं सामन्तों में दल बंदी तथा ब्रिटिश प्रभु सत्ता की स्थापना –

उसी समय महादजी सिंधिया की सेना जो बागी रतन सिंह एवं उसके दल की सहायक थी, ने उज्जैन के पास शिप्रा नदी के तट पर डेरा डाला। 13 जनवरी 1769 के दिन मराठों के साथ युद्ध में सलुम्बर, शाहपुरा एवं बनेड़ा के प्रमुख मारे गए। कोटा के राज राजा जालिम सिंह झाला एवं मेवाड़ के प्रधान मेहता अगरचंद, महाराणा अरि सिंह के साथ लड़ते हुए बुरी तरह जख्मी हुए। मेहता अगरचंद एवं अन्य लोग मराठों द्वारा बंदी बना लिए गए। महाराणा के आदेश पर रूपाहेली ठाकुर, शिव सिंह ने कुछ आदिवासियों (बावरी जाति) को भेजा जो मेहता अगरचंद को छुड़वाने में सफल हुए। अन्य सैनिक बाद में रिहा हुए। मेवाड़ की सेना (अधिकतर मुस्लिम एवं सिंधी) ने युद्ध पश्चात् उज्जैन में लूट–पाट की। इस कारण सिंधिया उत्तेजित एवं क्रोधित हो गए। युद्ध के पश्चात्, कोटा के जालिम सिंह झाला, महादजी सिंधिया के प्रबल समर्थक बनें।

''सन् 1769 में उज्जैन युद्ध की असफलता के बाद सलूम्बर के रावत भीम सिंह ने महाराणा अरि सिंह द्वितीय को सलाह दी कि पूर्व प्रधान अमर चन्द बड़वा (सनाढ्य ब्राह्मण) को पुनः बुलाकर जिम्मेदारी सौंपी जाए। इस पर महाराणा उनके घर गए और प्रधान पद की जिम्मेदारी सम्भालने का प्रस्ताव रखा। अमरचंद बड़वा द्वारा व्यक्त की गई गंभीर आपत्तियों के कारण महाराणा ने किसी भी हद तक उनकी मदद करने का वादा किया।''

अमरचंद बड़वा ने प्रधान के रूप जिम्मेदारी स्वीकार की और महादजी सिंधिया से प्रतिशोध के चलते उदयपुर की किलेबंदी शुरू की। जबकि उदयपुर के अच्छे महत्वपूर्ण रणनीति की दृष्टि वाले स्थानों पर ज्यादातर उमराव और रावत तैनात किए गए, लेकिन पूर्व प्रधान मेहता अगरचंद कुछ उमरावों के साथ सलाहकार के रूप में महाराणा अरि सिंह के साथ रहे। युद्ध तकरीबन छः महीनों तक चला। महादजी सिंधिया जो रतन सिंह की ओर से लड़ रहे थे, आखिरकार 21 जुलाई 1769 को अपने सैन्य दल के साथ लौट गये। महाराणा अरि सिंह द्वितीय, अमरचंद बड़वा, सलूम्बर के रावत भीम सिंह एवं कुराबड़ के रावत अर्जुन सिंह से बहुत प्रसन्न थे।

सन् 1773 में महाराणा अरि सिंह के मरणोपरांत नाबालिग कुंवर हमीर सिंह द्वितीय को गद्दी पर बिठाया। जल्द ही कुराबड़ के रावत अर्जुन सिंह और अन्य चुण्डावतों ने जो अमरचंद बड़वा द्वारा निष्ठावान कहलाए गए थे। महाराणा हमीर सिंह के पास प्रधान पद के संचालन को लेकर अपनी नाराजगी जतायी। सन् 1775 में अमरचंद बड़वा को बंदी बनाने के बाद जहर देकर मार दिया गया।

महाराणा हमीर सिंह द्वितीय (ज. 1761–78) का वयस्क होने से पहले 1778 में निधन हो गया। छोटे नाबालिग भाई कुंवर भीम सिंह गद्दी पर बैठे। सन् 1784 में बाईजीराज (महाराणा भीम सिंह की माता) की विश्वसनीय सेविका, बाई रामप्यारी की सलाह पर जनानी महल के कार्यकारी सोमचंद गांधी को प्रधान बनाया गया। उन्होंने राज्य के शत्रुओं से मित्रता की जैसे कि रावत रतन सिंह ओर कोटा, बूंदी के शासक। रावत अर्जुन सिंह, रावत प्रताप सिंह और उनके अन्य साथियों ने महाराणा भीमसिंह की खिल्ली उड़ाई।

''मेवाड़ में शक्तावतों एवं चुण्डावतों के दो मुख्य राजपूत दल थे। वे हमेशा एक दूसरे से बैर रखते एवं युद्ध करते रहते थे। यह गुटबाजी मेवाड़ में फिर से तब उभरी जब प्रधान सोमचंद गांधी शक्तावतों की ओर से आए जिससे भीण्डर महाराज मोखम सिंह सबसे ताकतवर बने। राज्य के प्रशासन में जहां चुण्डावत, सलूम्बर रावत भीम सिंह के साथ बने रहे वहीं कुराबड़ रावत अर्जुन सिंह इत्यादि की उपेक्षा की गयी। अक्टूबर 1789 में कुराबड़ के रावत अर्जुन सिंह एवं भदेसर के रावत सरदार सिंह ने मिलकर जनानी महल में सोमचंद गांधी की हत्या करवाई। सोमचंद के छोटे भाई सतिदास गांधी को प्रधान बनाया गया।''

6.4 प्रधान मेहता अगरचंद की प्रशासनिक भूमिका –

जहाजपुर और माण्डलगढ़ के मध्य स्थित अमरगढ़ किले को लेकर बूंदी के राव राजा उम्मेद सिंह के साथ विवाद खड़ा हुआ। पश्चात् बूंदी के राजकुमार अजीत सिंह ने महाराणा अरि सिंह को शिकार का निमन्त्रण दिया और धोखे से उनकी हत्या कर दी। युवा हमीर सिंह द्वितीय ने मेवाड़ की राजगद्दी संभाली। प्रधान अमरचंद बड़वा, अगरचंद मेहता और

जसवंतराय पंचोली ने करजाली के महाराज बाघ सिंह, कुराबड़ के रावत अर्जुन सिंह एवं अन्य चुण्डावतों से राज्य की देखरेख करने की विनती की क्योंकि महाराणा नाबालिग थे। सन् 1778 में बालिग होने से पहले उनकी भी मृत्यु हो गयी। उनके छोटे भाई भीम सिंह ने मेवाड़ का सिंहासन सम्भाला।

सन् 1792 में महाराणा भीम सिंह ने मेवाड़ को अपनी बागी सरदार रतनसिंह से बचाने के लिए महादजी सिंधिया से मदद मांगी। महादजी ने सुरक्षा एवं अर्थ व्यवस्था करने के लिए मेवाड़ में अंबाजी इंगलिया को अपना प्रतिनिधि नियुक्त किया। मेहता अगरचंद के साथ अंबाजी इंगलिया और रावत अर्जुन सिंह को कुम्भलगढ़ किले से रावत रतन सिंह को हटाने के लिए बुलाया गया। भीषण लड़ाई में रतन सिंह हार गए लेकिन वह भागने में कामयाब रहे। अंबाजी सन् 1792 से 1799 तक उदयपुर में रहे, मेवाड़ सरदारों के बीच आपसी युद्ध को रोककर मेवाड़ के संसाधनों में काफी सुधार किया, साथ ही अपने लिए काफी धन दौलत भी जुटा ली। तत्पश्चात् नवम्बर 1796 में षड़यंत्रकारी प्रधान सतिदास गांधी और उनके भतीजे जयचंद को बंदी बना लिया गया। मेहता अगरचंद की प्रधान पद पर पुनः नियुक्ति की गयी और सन् 1799 में अपनी मृत्यु तक वे पद पर बने रहे। सलूम्बर रावत भीम सिंह को 'खिल्लत' (जमीन और धन की भेंट) से सत्कार किया।

मेहता अगरचन्द ने महाराणा अरिसिंह के समय से राजभक्त रहकर समय समय पर बहुत कुछ सेवा की थी। वि.सं. 1856 पौष (ई.स. 1799 दिसम्बर) में माण्डलगढ़ में उसका देहान्त होने पर उसका ज्येष्ठ पुत्र देवीचन्द मंत्री बनाया गया और जहाजपुर का किला उसके अधिकार में रखा गया, जिसे लकवा ने छः लाख रूपयों के एवज में शाहपुरे के राजा

से छीनकर पीछा महाराणा के खालसे में मिला लिया था। लकवा ने थोड़े ही दिनों में मेवाड़ की प्रजा से 2400000 रूपये वसूल किये। फिर अपनी ओर से जसवन्तराव भाऊ को अधिकार देकर वह जयपुर चला गया।[16]

वि. सं. 1859 (ई. स. 1802) में जसवन्तराव होल्कर सिन्धिया से गहरी हार खाकर मेवाड़ में चला गया, परन्तु जब सिन्धिया की सेना उसका पीछा करती हुई वहां भी आ पहुंची, तब वह नाथद्वारे चला गया। वहां के गोस्वामियों से उसने तीन लाख रूपये वसूल करना और मन्दिरों की सम्पत्ति लूट लेना चाहा। इस पर गोस्वामियों ने महाराणा को इसकी सूचना दी, जिस पर उसने देलवाड़े के राज कल्याणसिंह झाला, कूंठवा के ठाकुर विजयसिंह (सांगावत), आगर्या के ठाकुर राठौड़ जगतसिंह (जैतमालोत), मोई के जागीरदार अजीतसिंह भाटी, साह एकलिंग दास बोल्या और जमादार नाथू (सिन्धी) को सेना सहित नाथद्वारे की ओर रवाना किया। ये लोग वहां पहुंचकर गोस्वामी और तीनों मूर्तियों को लेकर चले; इतने में कोठारिये का रावत विजयसिंह चौहान भी मदद के लिए आ पहुंचा। पहले ये लोग ऊनवास गांव में ठहरे। यहां से आगे कुछ भय न होने से विजयसिंह अपने ठिकाने के लिए विदा हो गया। मार्ग में जसवंतराव होल्कर की फौज़ ने उस बहादुर सरदार को घेरकर कहा – 'शस्त्र और घोड़े दे जाओ।' शस्त्र और घोड़ों को देने में अपना अपमान समझकर उस वीर रावत ने अपने घोड़ों को मार ड़ाला और स्वयं वीरतापूर्वक शत्रुओं पर टूट पड़ा। शत्रु सेना में हजारों सैनिक थे, जो विजयसिंह की बहादुरी पर शाबास! शाबास! बेलते और अपनी जान का खतरा समझते थे। अन्त में वह वीर अपने राजपूतों सहित वहीं मारा गया।[17] ऊनवास से वे तीनों मूर्तियों उदयपुर पहुंचा दी गई।

इसके उपरान्त मेवाड़ के सरदारों से दंड के रूप में लाखों रूपये वसूल कर जसवन्तराव होल्कर अजमेर होता हुआ जयपुर की ओर चला गया। सिंधिया के अफसरों ने भी, जो होल्कर का पीछा करते हुए मेवाड़ में आए थे, महाराणा और उसके सरदारों से तीन लाख रूपये वसूल किए।[18]

मरहटों के उपद्रव तथा अत्याचार को देखकर मौजीराम ने, जो प्रधान बनाया गया था, महाराणा को यह सलाह दी कि मेवाड़ की सेना में यूरोपियन ढंग की शिक्षा पाये हुए नये सैनिक भरती किये जाऐं और उनका खर्च सरदारों से वसूल किया जाए। जब यह बात सरदारों को मालूम हुई, तब उन्होंने मौजीराम को अधिकार–च्युत करके उसके पद पर सतीदास को नियुक्त किया और उसके भाई शिवदास को, जो चूण्डावतों के डर से भागकर ज़ालिमसिंह के पास कोटे चला गया था, वापस बुला लिया।[19] इस घटना के कुछ दिनों पीछे, सलूम्बर के एक मठ में लकवा का देहान्त हो जाने पर, आंबाजी इंगलिया का भाई बालेराव शक्तावतों तथा सतीदास प्रधान से मिल गया। फिर उसने महाराणा के भूतपूर्व मंत्री देवीचन्द को, चूंडावतों का तरफदार समझकर, कैद कर लिया और चूण्डावतों की कुछ जागीरें छीन लीं। अपनी योजना को पूर्ण करने का सुअवसर देखकर ज़ालिमसिंह झाला भी, जो चूण्डावतों का विरोधी था, कोटे से फौज़ लेकर आया और शक्तावतों से मिल गया। वि.सं. 1858 फाल्गुन (ई.स. 1802 मार्च) में बालेराव ने महाराणा के पास पहुंचकर मौजीराम को सौंप देने के लिए कहा, परन्तु उसका कथन स्वीकृत न हुआ। इस पर मरहटी सेना महलों की ओर बढ़ी, तो साहसी मौजीराम ने बालेराव, जामलकर तथा ऊदाकुँवर को कैद कर लिया। इस तरह मरहटा सरदारों के कैद हो जाने पर चूण्डावतों ने उनकी सेना पर आक्रमण किया, जिससे वह तितर–बितर होकर गाडरमाला की ओर भाग गई।[20]

यह खबर सुनकर अपने मित्र आंबाजी के भाई बालेराव की कैद से छुड़ाने के लिए भीण्डर और लावा के शक्तावत सरदारों की सहायता लेकर ज़ालिमसिंह झाला चेजा घाटी की तरफ बढ़ा। महाराणा उससे मेल रखना चाहता था, परन्तु चुण्डावतों के दबाव में आकर वह सिन्धियों तथा सरदारों की 6000 सेना सहित उसका मुकाबला करने के लिए बढ़ा। घाटी के पास पांच दिन तक बड़ी बहादुरी के साथ ज़ालिमसिंह से लड़ाई होती रही, जिसमें रावत अजीतसिंह (सारंगदेवोत) सख्त घायल हुआ। महाराणा ने पालकी देकर उसे अपने ठिकाने में पहुँचा दिया। फिर ज़ालिमसिंह को भी उसकी इच्छानुसार महाराणा ने अपने पास बुला लिया और उसने अपने मालिक (महाराणा) से इस गुस्ताखी की क्षमा मांगी, जिस पर उस (महाराणा) ने उसके लिहाज़ से बालेराव आदि तीनों को छोड़ दिया और फौज़ खर्च के एवज़ में ज़ालिमसिंह को जहाजपुर का परगना और किला सौंप दिया तो उसने अपनी तरफ से विष्णुसिंह शक्तावत को वहां का हाकिम बनाया।[21]

वि.सं. 1860 (ई. स. 1803) में जसवन्तराव होल्कर ने मेवाड़ में दुबारा आकर महाराणा से चालीस लाख रूपये मांगे ओर उसका एक तिहाई तुरन्त लेना चाहा। इस पर महाराणा ने जैसे–तैसे 12 लाख रूपये एकत्र कर दे दिये और बाकी रूपये वसूल करने के लिए बलराम सेठ वहां रखा गया। देवगढ़ के सरदार से साढ़े चार लाख और भीण्डर के शक्तावत सरदार से दो लाख रूपये वसूल हुए। लावा तथा बदनोर के सरदारों से भी उसने बहुत रूपये लिए।[22]

वि.सं. 1862 (ई.स. 1805) में सिंधिया भी मेवाड़ में आकर बदनोर के पास ठहरा। वहां होल्कर और उसने मिलकर यह निश्चय किया कि अपने कुटुम्ब तथा सामान को मेवाड़ के किलों में रखकर अंग्रेजों से, जिन्होंने

हमसे उत्तरीय हिन्दुस्तान और नर्मदा के दक्षिण का सारा प्रदेश छीन लिया है, लड़ना चाहिए; परन्तु आंबाजी इंगलिया ने, जो इन दिनों सिंधिया का प्रधानमंत्री था और लकवा दादा को मदद देने के कारण महाराणा से द्वेष रखता था, यह सलाह दी कि आप दोनों को मेवाड़ का राज्य आपस में बाँट लेना चाहिए।

इस समय रावत संग्रामसिंह शक्तावत तथा कृष्णदास पंचोली तो होल्कर के और रावत सरदारसिंह चूंडावत सिंधिया के दरबार में महाराणा का प्रतिनिधि था। वे दोनों सरदार इस कठिन अवसर पर आपस का द्वेष छोड़कर एक हो गए और स्वामिभक्ति की प्रेरणा तथा कर्त्तव्य के अनुरोध से सिंधिया की स्त्री बैजाबाई को, जिसने अपने पति को मुठ्ठी में कर लिया था, अपनी ओर मिला लिया। इसके बाद उन्होंने होल्कर से मिलकर पूछा – 'क्या आप भी मेवाड़ को आंबाजी के हाथ बेच देना चाहते हैं ?' फिर उसके सम्मुख महाराणा की विकट स्थिति का ऐसा मर्मस्पर्शी शब्दों में चित्र खींचा कि उसका जी पिघल गया। सरदारसिंह तथा संग्रामसिंह को ढाढ़स बँधाते हुए उसने उत्तर दिया – 'मैं आप लोगों को विश्वास दिलाता हूँ कि आंबा की इच्छा पूरी न होने दूंगा; आप लोग आपस का बैर छोड़कर एक हो जाऐं।' इसके उपरान्त उसने सिंधिया से मिलकर कहा – 'महाराणा हमारे मालिकों के मालिक हैं[23], उन्हें सताना ठीक नहीं। उनके जो ज़िले दबा बैठे हैं उन्हें लौटाकर हम दोनों को उनसे मेल कर लेना चाहिए।' होल्कर की बातें सिन्धिया ने भी मान लीं। उस (होल्कर) ने निम्बाहेड़े का परगना महाराणा को लौटा भी दिया, परन्तु कुछ दिनों बाद होल्कर को अपने एक संवाददाता का इस आशय का पत्र मिला कि महाराणा का भैरवबख्श नामक दूत लॉर्ड लेक के डेरे में आकर उसके साथ अंग्रेजी सेना की सहायता से मरहटों को मेवाड़ से बाहर निकाल देने

की कोशिश कर रहा है। उस पत्र के पाते ही होल्कर आग बबूला हो गया। उसने तुरन्त सरदारसिंह, संग्रामसिंह तथा कृष्णदास पंचोली को बुलाकर उन्हें खूब फटकारा और उन पर कृतघ्नता एवं विश्वासघात का दोषारोप करते हुए कृष्णदास से पूछा – 'क्या मेवाड़ियों का अपनी कृतघ्नता प्रकट करने का यही ढंग है ?' इस पर कृष्णदास पंचोली ने बड़ी नम्रतापूर्वक मीठे तथा युक्तिपूर्ण शब्दों में उत्तर देना आरम्भ किया, परन्तु जसवन्तराव के मंत्री अलीकर ताँतिया ने उसे रोककर अपने स्वामी से कहा – ''आप और सिंधिया के बीच दुश्मनी पैदा कराकर ये 'रंगड़'[24] दोनों को बरबाद कर देंगे। आप को इनकी ईमानदारी का पता चल गया, इसलिए इनका साथ छोड़ दें, सिन्धिया से मेल कर लें और आंबाजी को मेवाड़ का सूबेदार नियुक्त करें। यदि आप मेरी सलाह न मानेंगे तो मैं आपका साथ छोड़कर सिन्धिया को मालवे ले जाऊंगा।'' भास्कर भाऊ को छोड़कर और सभी मंत्रियों ने ताँतिया की बातों का समर्थन किया। फिर होल्कर उत्तर की ओर चला गया। वहां उसकी लॉर्ड लेक से मुठभेड़ हुई। उसे हराकर लेक ने पंजाब तक उसका पीछा किया। होल्कर के मेवाड़ से विदा होते ही सिंधिया से सदाशिवराव के द्वारा 1600000 रूपये मेवाड़ से वसूल किये।[25]

मरहटों की ऐसी लूट–खसोट से मेवाड़ की बड़ी दुर्दशा हो गई थी और महाराणा भीमसिंह अत्यन्त खिन्न तथा तंग हो रहा था; इतने में एक नया उपद्रव उठा। वि.सं. 1855 (ई. स. 1799) में सलूम्बर के रावत भीमसिंह के द्वारा महाराणा की कुंवरी कृष्णकुमारी का जोधपुर के महाराजा भीमसिंह के साथ सम्बन्ध (सगाई) हुआ था, परन्तु वि.सं. 1860 (ई. स. 1803) में उक्त महाराजा का देहान्त हो जाने से उसका सम्बन्ध जयपुर के महाराजा जगतसिंह से किया गया।

दौलतराव सिंधिया ने, जो इन दिनों महाराजा जगतसिंह से रूपये न मिलने के कारण चिढ़ा हुआ था, इस सम्बन्ध का विरोध करते हुए जयपुर को नीचा दिखाने के उद्देश्य से महाराणा को कहलाया कि जयपुर के वकील को, जो शादी का पैगाम लेकर आया है, उदयपुर से बाहर कर दो, किन्तु महाराणा ने उसका कहना न माना, तब वह स्वयं उदयपुर पर चढ़ आया। उदयपुर के निकट घाटी में महाराणा से उसकी लड़ाई हुई, जिसके फलस्वरूप महाराणा को लाचार होकर उसकी बात मान लेनी पड़ी। फिर सिंधिया एकलिंगजी के मन्दिर में महाराणा से मिलकर वापस चला गया।

इन्हीं दिनों पोकरण (जोधपुर राज्य में) का ठाकुर सवाईसिंह, जो जयपुर में था, महाराजा जगतसिंह से अपनी पोती की शादी करना चाहता था। इस पर जोधपुर के महाराजा मानसिंह ने उसके पास इस आशय का एक पत्र भेजा कि तुम अपनी पोती का विवाह महाराजा जगतसिंह से करना चाहते हो, तो पोकरण में करना। अगर उसे जयपुर में ले जाकर करोगे, तो राठौड़ों की हतक होगी। इसके उत्तर में उसने लिखा कि मेरे भाई उम्मेदसिंह का घर जयपुर में है और गीजगढ़ का ठिकाना उसकी जागीर में है। इसलिए यहां विवाह करने में तो कोई हतक की बात नहीं है; परन्तु महाराणा की कन्या कृष्णकुमारी, जिसका सम्बन्ध पहले स्वर्गीय महाराजा भीमसिंह के साथ हो चुका था, महाराजा जगतसिंह को ब्याही जाने वाली है, इसमें अलबत्ता राठौड़ों की मान–हानि है। पत्र पाते ही मदान्ध मानसिंह ने परिणाम तथा औचित्य–अनौचित्य का कुछ भी विचार न कर उदयपुर की ओर कूच कर दिया। यह खबर सुनकर महाराजा जगतसिंह भी जयपुर से रवाना हुआ और बीकानेर का महाराज सूरतसिंह तथा नवाब अमीरखां उसके मददगार बने। अन्त में वि.सं. 1863 फाल्गुन सुदि (ई.स. 1807 मार्च) में जयपुर और जोधपुर की सीमा के निकट

पर्वतसर के पास दोनों की सेनाओं में गहरी लड़ाई हुई। लड़ाई छिड़ने से पहले राठौड़ों में आपस की फूट पड़ गई थी और उनमें से अधिकांश, जो अपने स्वामी से अप्रसन्न थे, जयपुर की सेना में शामिल हो गये, जिससे महाराजा मानसिंह को भागकर जोधपुर के किले में शरण लेनी पड़ी।

तदनन्तर जयपुर के दीवान रायचन्द ने तो महाराज जगतसिंह को कृष्णकुमारी से शादी कर जयपुर लौटने और ठाकुर सवाईसिंह ने जोधपुर पर चढ़ाई करने की सलाह दी। उक्त महाराजा ने सवाईसिंह की बात मानकर जोधपुर को जा घेरा। मानसिंह ने नवाब अमीरखां को घूस देकर अपनी तरफ मिला लिया, जिससे महाराजा जगतसिंह को वहां से लौटना पड़ा।

इसके उपरान्त निष्ठुर अमीरखां ने महाराजा मानसिंह से कहा – 'जब तक कृष्णकुमारी जीवित है तब तक कभी–न–कभी फिर झगड़ा हो जाने की आशंका है, इसलिए जैसे हो सके उसे मरवा डालना ही ठीक होगा।' अमीरखां की बात मानकर उक्त महाराजा ने उसे इस काम के लिए उदयपुर की ओर रवाना किया। नवाब ने उदयपुर पहुँचकर अजीतसिंह चूंडावत के द्वारा, जो उसकी सेना में महाराणा की तरफ से वकील था, महाराणा को कहलाया – 'या तो आप अपनी कन्या का विवाह महाराजा मानसिंह के साथ कर दें या उसे मरवा डालें। यदि आप मेरा कहना न मानेंगे, तो मैं आपके देश को बर्बाद कर दूंगा।' मेवाड़ की दशा ऐसी निर्बल हो गई थी कि महाराणा को लाचार होकर उसका कथन स्वीकार करना पड़ा। उसने महाराज दौलतसिंह (भैरवसिंहोत) को बुलाकर कृष्णकुमारी का वध करने की आज्ञा दी। यह हुक्म सुनकर दौलतसिंह का क्रोध भड़क उठा और उसकी देह में आग सी लग गई। आवेश में आकर उसने कहा – 'ऐसा क्रूर और अमानुषिक आदेश करने वाले की जीभ

कटकर गिर जानी चाहिए। निरपराध अबला पर हाथ उठाना मेरा धर्म नहीं है; यह तो हत्यारों का काम है। यह कहकर दौलतसिंह के चुप हो जाने पर दरबार में कुछ देर तक सन्नाटा छा गया। फिर महाराणा अरिसिंह (द्वितीय) के पासवानिये (अनौरस) पुत्र जवानदास को आज्ञा दी गई। कटार लेकर उसने अन्तःपुर में प्रवेश किया, परन्तु सोलह वर्ष की उस सुकुमारी एवं रूपवती राजकुमारी को देखकर उसका शरीर काँपने लगा और हाथ से कटार गिर गया।'

जनाने में इस प्रकार उसके आने का कारण जानकर कृष्णकुमारी की माता महाराणी चावड़ी दुःख से कातर एवं विह्वल होकर रोने लगी। महाराणी को विलाप करते देखकर जवानदास का जी भर आया और वह राजमन्दिर से खिसक गया। तब राजकुमारी को जहर मिला हुआ शरबत पीने के लिए दिया गया। उसने प्रसन्नतापूर्वक शरबत का प्याला हाथ में लेकर अपनी माता को दिलासा देते हुए कहा – 'माता! तू क्यों विलाप कर रही है ? मैं मौत से नहीं डरती। क्या मैं तेरी बेटी नहीं हूँ ? मैं मृत्यु से क्यों डरूँ ? राजकन्याओं का जन्म तो आत्मबलि के लिए ही होता है। यह मेरे पिता का अनुग्रह है कि मैं अब तक जी रही हूँ। प्राणोत्सर्ग द्वारा अपने पूज्य पिता का कष्ट दूर कर उनके राज्य की रक्षा में अपने जीवन को सफल एवं सार्थक बनाने का यह मौका मुझे अपने हाथ से न जाने देना चाहिए।' यह कहकर उसने विष पी लिया, परन्तु वह क़ै होकर निकल गया। इस तरह तीन बार ज़हर पीने और प्रत्येक बार क़ै से निकल जाने पर अफ़ीम पिलाने से उसकी जीवन लीला समाप्त हुई। यह करूणापूर्ण घटना वि.सं. 1837 श्रावण वदि 5 (ई.स. 1810 ता. 21 जुलाई) को हुई। इसके कुछ दिनों पीछे राजकुमारी की माता भी अन्नजल छोड़

देने के कारण इस संसार से चल बसी। फिर नवाब अमीरखां मेवाड़ से लौट गया।[26]

6.5 मेवाड़ प्रशासन में प्रधान पद के लिए प्रतिस्पर्द्धा (मेहता शेर सिंह एवं मेहता राम सिंह) –

महाराणा भीम सिंह के शासन काल में आर्थिक व्यवस्था के कारण शाही सरकार का कर ऋण सात लाख रूपयों तक बढ़ गया था। सन् 1828 में महाराणा जवान सिंह (1828–38) ने मेहता (चील) राम सिंह को प्रधान पद से हटाया और मेहता शेर सिंह, चतुर राजनेता मेहता देवीचंद के भतीजे को प्रधान पद पर नियुक्त किया। रिश्ते में मेहता (चील) राम सिंह, मेहता (बच्छावत) शेर सिंह के फूफा थे। देवीचंद की बहिन देव कंवर का ब्याह राम सिंह से हुआ था और राम सिंह की बहन गट् कंवर का ब्याह देवीचंद से हुआ था। शेर सिंह को उनकी निष्ठा एवं ईमानदारी के लिए जाना जाता था। लेकिन वे कुशल अर्थ प्रशासक नहीं थे। परिणामस्वरूप राज्य की उधारी बढ़ती चली गयी और महाराणा जवान सिंह के पास मेहता (चील) राम सिंह को फिर से बुलाने के अलावा कोई विकल्प नहीं रहा।

सन् 1831 में, मेहता राम सिंह को प्रधान पद से हटाकर मेहता शेर सिंह को पुनः नियुक्त किया गया। दोनों ही सत्ता के तीव्र आकांक्षी थे और जो भी शक्तिशाली हुआ वह प्रधान पद का दावेदार बना। मेवाड़ राज्य के प्रधान मेहता शेर सिंह ने ब्रिटिश सरकार से फुलिया परगना (जिला) शाहपुरा को पुनः प्राप्त करवाया। सन् 1831 में शाहपुरा के राजाधिराज माधो सिंह ने प्रसन्न होकर उबला गांव उपहार स्वरूप शेर सिंह को प्रदान किया।

महाराणा सरदार सिंह (रा. 1838–42) के राजगद्दी पर आसीन होने के पश्चात् ही मेहता (बच्छावत) शेर सिंह को बर्खास्त कर बंदी बना लिया गया। महत्वाकांक्षी मेहता (चील) राम सिंह को प्रधान पद पर पुनः नियुक्ति की गयी। विदित रहे कि रिश्ते में मेहता राम सिंह मेहता शेर सिंह के फूफा (बुआ देव कंवर के पति) लगते थे।

मेहता शेर सिंह को कारावास में बहुत कष्ट उठाने पड़ रहे थे। इसलिए राजनीतिक एजेंट मेजर रोबिनसन ने महाराणा से उनके प्रति नरमी बरतने की विनती की। लेकिन उनके आलोचकों ने महाराणा के ब्रिटिश एजेंट की बात ना सुनने की सलाह दी। अंततः वचन पत्र पर दस लाख रूपए जुर्माने की रकम भरने पर मेहता शेर सिंह को कैद से रिहा किया गया। क्योंकि उनके आलोचक उन्हें जान से मारना चाहते थे, उन्हें मारवाड़ की ओर पलायन करने की सलाह दी गयी।

''महाराणा स्वरूप सिंह (1842–61) को मेहता (चील) रामसिंह पर आर्थिक अव्यवस्था को लेकर अविश्वास होने के कारण उन्होंने मेहता शेर सिंह को मारवाड़ से बुलवाकर खास रूक्के पर हस्ताक्षर करवाकर पुनः प्रधान पद पर नियुक्त किया। रूक्के में उनके पूर्वज मेहता अगरचंद की प्रशंसा की गयी। महाराणा स्वरूप सिंह ने मेहता शेर सिंह के राजस्व को सुधारने, पुराने कर्ज चुकाने एवं निर्धारित शुल्क पर छूट पाने के प्रयासों का भी स्मरण किया। उनका वेतन बीस हजार रूपये प्रति वर्ष एवं आठ हजार रूपये की अधिक रकम पुनर्वास के लिए निर्धारित की गयी।''

मेवाड़ के महाराणा स्वरूप सिंह (1842–61) छटून्द चाकरी (ठाकुरों द्वारा महाराणा को दिया गया शुल्क) के मसले को अपने सरदारों के लिए हल करना चाहते थे। छटून्द चाकरी शुल्क के अन्तर्गत ठाकुरों को सेवा

करने का एक छठा हिस्सा राजकीय कोष में जमा करवाना होता था। इसलिए प्रधान मेहता शेर सिंह ने राजनीतिक एजेंट लेफ्टिनेंट कर्नल रोबिनसन की सहायता से महाराणा के लिए छटून्द चाकरी के संशोधन प्रक्रिया का मसौदा बनाया, जिस पर प्रधान एवं सरदारों ने हस्ताक्षर किए।

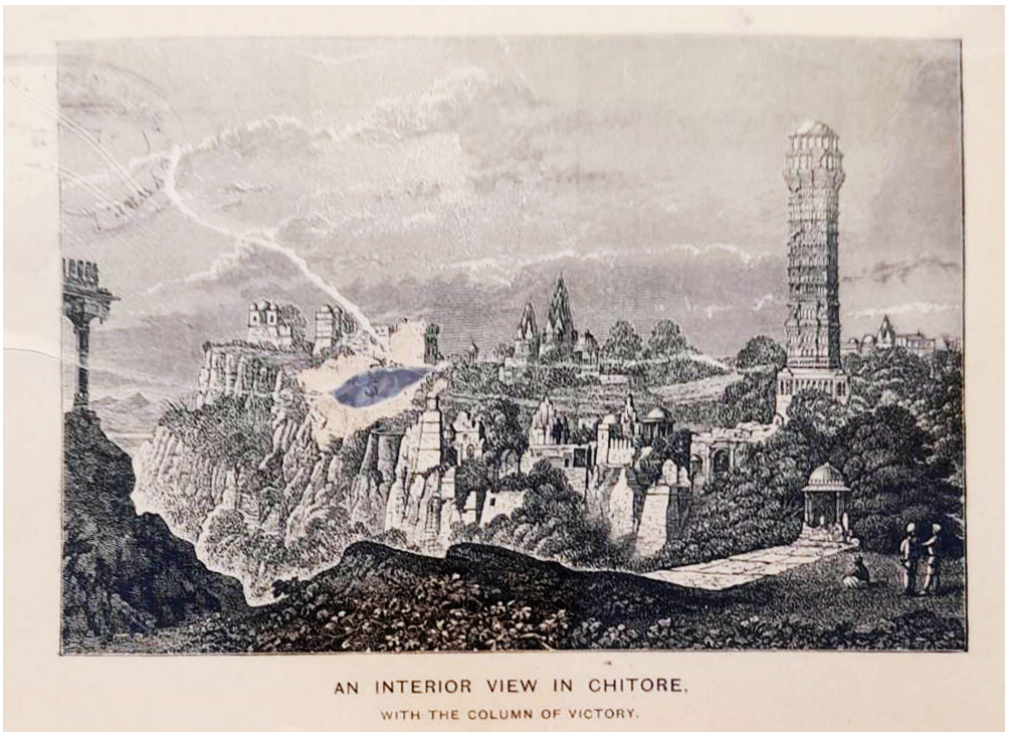

AN INTERIOR VIEW IN CHITORE,
WITH THE COLUMN OF VICTORY.

ISLAND AND PALACE OF JUG MUNDIR,
IN THE LAKE OF UDEYPORE.

उदयपुर के महाराणा स्वरूप सिंह द्वारा राजनीतिक एजेन्ट लेफ्टिनेंट कर्नल रोबिनसन को खरीता (पत्र), तिथि – ज्येष्ठ बद 5 सम्वत् 1903 (मई 1847) को पेश किया। ''यह निश्चित ही दिवंगत मेहता (चील) राम सिंह के प्रशासन के दौरान की बात है जिस कारण उन्हें प्रधान पद से हटाया गया और उनकी जगह मेहता (बच्छावत) शेर सिंह को नियुक्त किया गया। तब से ही आप की कृपा से राज्य कर वसूली में बढ़ोतरी हुई है। इस कारण मैं आपकी सरकार को कर की भरपाई कर पाया हूँ एवं राज का पुराना कर्ज भी चुकता हुआ है। मैंने प्रधान मेहता शेर सिंह को आप के पास ब्यौरेवार विवरण देने भेजा है। उन्होंने एक निष्ठावान सेवक के रूप में स्वयं को सिद्ध किया है और मैं उनकी सेवाओं से प्रसन्न हूँ। इस अवसर पर जो उनके साथ शत्रुता रखते हैं और कर्नल सदरलैण्ड के समक्ष मामले की गलत प्रस्तुति करते हैं मैंने मेहता शेर सिंह को आश्वासन दिया है कि अगर वे निष्ठावान रहेंगे तो मैं सदैव उनका समर्थन करूंगा एवं भविष्य में उन्हें दण्ड की रकम में छूट दी जाएगी।''

सन् 1848 में प्रधान मेहता शेर सिंह, महाराणा स्वरूप सिंह के समक्ष नई मुद्रा का प्रस्ताव लाए। महाराणा ने इसको मंजूरी दी। मेहता शेर सिंह ने राजनीतिक एजेंट कर्नल रोबिनसन की मदद से ब्रिटिश सरकार की स्वीकृति दिलवायी। नये रूपये का सिक्का स्वरूप शाही रूपये के नाम से प्रचलित हुआ। सिक्के के अग्रभाग पर देवनागरी में लिखा – 'चित्रकूट उदयपुर' एवं पृष्ठ भाग पर देवनागरी में लिखा – 'दोस्ती लंघन' (लंदन)।

6.6 मेहता गोकलचंद मेवाड़ के प्रधान पद पर नियुक्ति एवं उनकी प्रशासनिक सेवाऐं –

प्रधान मेहता देवीचंद के पोते गोकलचंद मेहता (जन्म 1807–78) को मेवाड़ के प्रधान पद पर सन् 1856 में महाराणा स्वरूप सिंह द्वारा नियुक्त किया गया जब उनके पिता मेहता स्वरूपचंद (ज. 1789–1859) जीवित थे। उन्होंने आर्गीया के किले (वर्तमान राजसमन्द जिले में आमेट के पास) को तब पुनः प्राप्त किया जब एक बागी उत्तराधिकारी ने महाराणा को चुनौती देकर अवैध रूप से किले पर कब्जा कर लिया था। उनकी असाधारण वीरता के लिए महाराणा स्वरूप सिंह ने उन्हें सम्मानित कर उनके परिवार को जागीर प्रदान की। अपने पूर्वजों की ही भांति वे महाराणा के प्रति निष्ठावान एवं विश्वासपात्र रहे।

सन् 1859 में प्रधान मेहता गोकलचंद के विरोधी सक्रिय हुए। महाराणा के कान भरे गए। महाराणा स्वरूप सिंह (रा. 1842–61) ने गोकलचंद को प्रधान पद से हटा कर कोठारी केसरी सिंह को नियुक्त किया। लेकिन अल्पकाल में प्रधान कोठारी केसरी सिंह पर राज्य निधि से सम्बन्धित सट्टेबाजी के गम्भीर आरोपों के कारण मेहता गोकलचंद को पुनः सन् 1861 में प्रधान पद पर नियुक्त किया गया।

महाराणा शंभूसिंह (रा. 1861–74) के समय में रूपाहेली के प्रमुख बाघ सिंह ने लोगों द्वारा अपने बेटे एवं भाइयों की हत्या का दावा कर मूंड कट्टी (रक्त/हत्या की रकम) की माँग की। इस मामले की छानबीन के लिए महाराणा शंभू सिंह ने पंचायत बुलाई जिसमें बेदला के राव बख्ता सिंह, भीण्डर के महाराज मदन सिंह, मेहता जालिम सिंह (प्रधान अगरचंद मेहता के पोते), कोठारी छगनलाल (पन्नालाल मेहता के ससुर), बक्शी

मथुरादास एवं धिनकारिया उदयराम शामिल थे। पंचायत ने महाराणा स्वरूप सिंह के पूर्व निर्णय को समर्थन देते हुए बाघ सिंह के मूंड कट्टी को नकार दिया। लेकिन रूपाहेली प्रमुख ने निर्णय का अनुपालन करने से मना किया। इसलिए साहसी सेनापति एवं प्रधान मेहता गोकलचंद ने विद्रोही प्रमुख को वश करने हेतु राजकीय सैन्य की चार बंदूकों, एक सौ चालीस घुड़सवार दल, पाँच सौ साठ पैदल सैनिकों के दल के साथ रूपाहेली की ओर कूच किया। अन्य प्रमुखों की सेना ने भी राजकीय सैन्य का साथ देते हुए 15 मई 1861 को रूपाहेली गाँव पर एक साथ आक्रमण किया, तब प्रमुख बाघ सिंह ने आत्मसमर्पण किया।

6.7 मेवाड़–महाराणा के आदेश से नाथद्वारा के गोस्वामी गिरधारी लाल के विरूद्ध प्रशासनिक कार्यवाही –

सन् 1671 की बात है कि बादशाह औरंगजेब के उन्मत्त मुगल सैनिकों के धमकाने पर वैष्णव धर्म के गोसाई दामोदर ने अपने इष्टदेव श्रीनाथजी की मूर्ति उठायी एवं गोवर्धन पर्वत (गिरिराज पर्वत, मथुरा–वृन्दावन के पास) से उदयपुर की ओर पलायन किया। मेवाड़ के महाराणा राज सिंह (रा. 1652–80) ने उन्हें उदयपुर से 30 मील उत्तर की ओर सीहाड़ गाँव (बनास नदी के किनारे) में आश्रय दिया जो बाद में नाथद्वारा के नाम से प्रसिद्ध हुआ। तीर्थ का व्यय चलाने हेतु उन्हें पर्याप्त जागीर बहाल की गयी। इस तरह गोसाई या गोस्वामी 'ठिकानेदार' (प्रांत प्रमुख) के नाम से भी पहचाने जाने लगे।

सन् 1871–76 के दौरान नाथद्वारा के गोसाई (गोस्वामी, वैष्णव धर्म प्रमुख) गिरधारी लाल ने अपने शासक मेवाड़ के महाराणा के प्रति अविश्वास एवं अवज्ञा का रूख अपनाया। तब ब्रिटिश सरकार ने उनसे

बलपूर्वक समर्पण करवाने का निर्णय लिया। 8 अप्रेल 1876 को महाराणा सज्जन सिंह (रा. 1874–84) के निर्देश पर राजनीतिक एजेंट मेजर गनिंग, पंच सरदारी मण्डल के सदस्य, बेदला के राव बख्ता सिंह, प्रधान मेहता गोकलचंद एवं मुंशी मेहता पन्नालाल ने मेवाड़ भील के बंदूक धारी दस्तों के साथ नाथद्वारा की ओर प्रस्थान किया। गोसाई को 200 लोगों के साथ शहर के मोती महल में घेर लिया गया और बंदी बनाकर उदयपुर भेज दिया गया।

उनके अल्पायु पुत्र को उनके स्थान पर आसीन कर दिया गया। दरबार के सैनिक दल को तीर्थ की रक्षा हेतु वहीं छोड़ दिया गया। नाथद्वारा पर दरबार का प्रभाव पाँच वर्षों तक रहा। कुशल शिक्षक द्वारा युवा गोसाई की शिक्षा का प्रबन्ध किया गया। मेवाड़ से निष्कासित गोसाई, गिरधारी लाल को मथुरा भेज दिया गया।

6.8 राय मेहता पन्नालाल के प्रशासकीय कार्य –

''23 दिसम्बर 1869 को महाराणा शंभू सिंह (रा. 1861–74) के वयस्क होने पर अपने पूर्ण अधिकारों के साथ नई कार्यकारी परिषद 'महकमा खास' की स्थापना की एवं मेहता पन्नालाल (जन्म 1843–1919) को मुंशी पद पर नियुक्त किया गया। जुलाई, 1870 में कोठारी केसरी सिंह ने प्रधान पद से त्याग पत्र दे दिया क्योंकि वे नयी न्यायिक प्रशासन बदलाव के विरोध में थे। प्रधान के पद की तुरन्त पूर्ति नहीं की गयी, लेकिन प्रधान पद का कार्य मेहता गोकलचंद को प्रशासन की देखभाल एवं लक्ष्मणराव को न्याय तंत्र के रूप में सौंपा गया।''

''गोकलचंद को फिर से प्रधान पर पर नियुक्त किया, लेकिन प्रधान पद के अधिकार महकमा खास के मुंशी मेहता पन्नालाल को ही सौंपे।

मुंशी मेहता पन्नालाल शासक एवं अन्य प्रशासनिक शाखाओं के बीच विशेष सम्पर्क सूत्र के रूप में कार्यरत रहे।''

सन् 1871 में दूरदर्शी मुंशी मेहता पन्नालाल के प्रयासों से महकमा खास का आठ विभागों में पुनर्गठन हुआ। मेहता जालिम सिंह एवं उनके दत्तक पुत्र मेहता तखत सिंह को सैन्य, शस्त्रागार एवं किलेदारी का कार्यभार सौंपा गया। प्रजा की भावनाओं को ध्यान में रखते हुए मेहता गोकलचंद एवं लक्ष्मणराव को कोई भी मुख्य जिम्मेदारी नहीं सौंपी गयी। मुंशी मेहता पन्नालाल शासक एवं अन्य प्रशासनिक शाखाओं के बीच विशेष संपर्क सूत्र के रूप में कार्यरत रहे। आपराधिक गतिविधियाँ घटीं, राजस्व की वसूली में सुधार आया एवं भूमि अभिलेखों का बेहतर रूप से संधारण होने लगा।

मुंशी मेहता पन्नालाल की सलाह से महाराणा शंभूसिंह ने निर्णय लिया कि खालसा (राज्य भूमि) में भू–राजस्व (मालगुजारी) के नियमित भुगतान के लिए उचित कदम उठाये जाए। गाँवों में उपजाऊ क्षेत्र को नाप कर उस समय लोगों की उपयोगिता के अनुसार मिट्टी का वर्गीकरण किया गया। इस योजना का घोर विरोध किया गया और राज्य अधिकारियों एवं भूमि शोषण वर्ग द्वारा इसे विफल करने का हर प्रकार से प्रयास किया गया।

सन् 1872 में कुछ लोगों ने आरोप लगाया कि प्रधान मेहता गोकलचंद के पुत्र मेहता गोपाल सिंह के कब्जे में स्वर्गीय महाराणा स्वरूप सिंह के पासवान के खोये हुए गहने हैं। इस मामले की छान–बीन हुई लेकिन मेहता गोपाल सिंह के पास कोई गहने नहीं मिले। लेकिन संशय के आधार पर उन्हें बंदी बनाकर एक लाख रूपये का जुर्माना लगाया

गया। प्रधान मेहता गोकलचंद को भी एक लाख रूपये का जुर्माना लगाया। चूंकि, वे दोनों रकम का भुगतान करने में असमर्थ थे इसलिए मुंशी मेहता पन्नालाल ने सलाह दी कि दोनों ढाई से तीन हजार रूपये प्रति वर्ष कमाई वाले गाँव खालसा में दें।

6.9 महाराणा शंभू सिंह ने 'लंगर' एवं 'तलवार बंधाई' का विशेषाधिकार प्रदान किया –

सन् 1871 में मुंशी मेहता पन्नालाल की सेवाओं से खुश होकर महाराणा शंभू सिंह ने उनका वेतन बढ़ाकर दो हजार रूपए कर दिया। शंभू निवास के दक्षिण में नया महल लम्बे समय से निर्माणाधीन था। इस निर्माण कार्य को शीघ्रता से करवाने की जिम्मेदारी मुंशी मेहता पन्नालाल ने स्वयं पर ली। मेहता पन्नालाल की सेवाओं से खुश होकर महाराणा शंभू सिंह ने उद्घाटन के पश्चात् तुरन्त ही उन्हें सोने का लंगर (पैरों में पहने जाने वाला गहना) उपहार स्वरूप दिया।

6.10 प्रशासनिक पुनर्गठन एवं वित्तीय सुधार –

महाराणा सज्जन सिंह (रा. 1874–84) न केवल प्रशासनिक समस्याओं में उलझे थे बल्कि करीबी रिश्तेदारों एवं स्वजनों की अवज्ञा से भी परेशान थे इसलिए प्रधान मेहता पन्नालाल ने राज्य के कार्यों को सुचारू रूप से चलाने हेतु सभी पदाधिकारियों को एकजूट कर प्रशासन एवं वित्तीय सुधार की ओर ध्यान केन्द्रित किया। मेहता पन्नालाल के योग्य मार्गदर्शन से महाराणा सज्जन सिंह अपनी प्रजा, ठाकुरों एवं सरदारों का विश्वास पुनः जीत गए। सभी प्रशासकीय सुधारों में सबसे महत्वपूर्ण सुधार था, भिन्न खर्चों एवं करों का वित्तीय आय–व्यय।

मेहता पन्नालाल ने जो कदम उठाए वे मेवाड़ को आधुनिकता की ओर ले गए। नई सड़कें बनवाई और पुरानी का विस्तार किया गया। उनके आदेश से पहाड़ों पर वनीकरण, पानी की पाइप लाईन की मरम्मत एवं नई पाइप लाईन बिछाई गई। उन्होंने पुलिस दस्तों का आधुनिकीकरण एवं सेटलमेंट विभाग स्थापित कर कृषि एवं ग्रामीण सीमा का विवरण बनवाया। मेवाड़ की न्यायिक व्यवस्था में भी सुधार लाया गया। महाराणा सज्जन सिंह ने अतिरिक्त सिविल कोर्ट एवं क्रिमिनल कोर्ट का उद्घाटन किया जहां आधुनिक निर्णायक समिति की भाँति ही निर्णय लिए जाते थे। नए सरकारी विभागों के साथ ही महदराज सभा, अपील न्यायालय की स्थापना की गयी। उन्होंने प्रथम शैक्षणिक समिति की स्थापना की। प्रथम सरकारी मुद्रण भी स्थापित किया। मेवाड़ के इतिहास में इसे 'स्वर्णिम युग' के नाम से जाना जाएगा।

6.11 नमक–व्यापार समझौता –

दिल्ली दरबार से लौटते ही महाराणा सज्जन सिंह राज्य प्रशासन में गहरी रूचि लेने लगे। 10 मार्च, 1877 को महाराणा ने 'इजलास खास' (प्रिवी कौंसिल) नाम से राज्य परिषद के नये संविधान की घोषणा की। मेहता राय पन्नालाल जो अब तक महकमा खास के मुंशी की भूमिका निभा रहे थे, उन्हें 'इजलास खास' के मुंशी पद पर औपचारिक नियुक्ति दी गयी। राज्य परिषद के पुनर्गठन के पीछे उन्हीं की बुद्धि कार्यरत थी। मेहता तख्त सिंह को हाकिम गिरवा का प्रभार सौंपा गया। कुम्भलगढ़ जिला मारवाड़ राज्य के गोडवाल सीमा से प्रायः मीणा डकैतों द्वारा से आतंकित हो रहा था। मेहता तखत सिंह को इस समस्या पर ध्यान देने तथा कड़ी सुरक्षा का भार सौंपा गया।

14 फरवरी, 1878 को जब महाराणा सज्जन सिंह राजनगर में डेरा डाले हुए थे, जहां वाईसराय परिषद के सदस्य मिस्टर ए. सी. ह्यूम एवं मेवाड़ के पॉलिटिकल एजेंट लेफ्टिनेंट कर्नल इम्पी नमक व्यापार समझौते पर बातचीत करने पहुँचे। महाराणा की ओर से राय मेहता पन्नालाल एवं कविराज श्यामल दास ने समझौते पर विचार विमर्श किया।

समझौते के अनुसार ''देश में नमक के काम पर रोक लगने का विपरीत प्रभाव मेवाड़ पर भी हुआ। मुख्य रूप से बंजारा जाति द्वारा किया जाने वाला नमक व्यापार ठप होने लगा। कारीगर बेरोजगार हो गए, व्यापारियों ने अपना व्यापार खोया एवं कई स्थान पूरी तरह से वीरान हो गए। यह अशांति पूरे देश में फैलने लगी। नमक की बढ़ती कीमतों को देखते हुए महाराणा ने अपनी ओर से अन्य वस्तुओं पर लगने वाली चूंगी हटा दी। लेकिन जिलों से नमक की महंगाई एवं अभाव को लेकर लगातार शिकायतें आती रहीं।''

जुलाई, 1880 को महाराणा सज्जन सिंह ने राय मेहता पन्नालाल को नमक व्यापार के विषय पर बारीकी से छानबीन करने हेतु जिलों में भेजा। एक महीने पश्चात् उन्होंने विवरण प्रस्तुत किया जिसमें नमक के उचित वितरण का सुझाव दिया। एक बार पुनः कवि श्यामलदास ने मेहता पन्नालाल को सुझाव को खारिज करने का असफल प्रयास किया। लेकिन मेहता पन्नालाल के दृढ़ निश्चय और महाराणा के सहयोग से मेवाड़ प्रशासन ने इस उद्देश्य तक पहुँचने हेतु सफल कार्यवाही की।

प्रधान मेहता पन्नालाल के असाधारण प्रयासों को दो अद्‌भुत मिसालें हैं – न्यायिक व्यवस्था को विशेषाधिकारों से अलग करना एवं प्रथम बार गजट (राज सूचना पत्र) को प्रकाशित करना। महाराणा के प्रमुख

सलाहकार के रूप में उन्होंने यह सब अपने तिहरे दायित्यों – महाराणाओं से निष्ठा, ब्रिटिश राजकीय विभागों से समन्वय एवं राज्य की प्रजा का कल्याण जो उनके हृदय के निकट था, को चतुराई से निभाया। ऐसा करने में उन्हें अदालत की नाराज़गी निर्वासन और भाग्य के उलटफेर को भुगतना पड़ा। यहां तक कि उनकी हत्या का प्रयास भी किया गया। इस प्रकार दूरदर्शी एवं दक्ष प्रशासक, प्रधान मेहता राज पन्नालाल ने अपनी सेवाओं से तीन महाराणाओं का विश्वास जीतने का भरपूर प्रयास किया।

''मेवाड़ के प्रशासनिक कार्यों को दो मुख्य विभागों में बाँटा गया – महद्राज सभा और महकमा खास। महद्राज सभा (अपील न्यायालय/मेवाड़ उच्च न्यायालय) को इजलास खास की जगह स्थापित किया गया। वह न्यायिक विभाग जो स्वयं महाराणा द्वारा कार्यरत था। जबकि विशिष्ट विभाग महकमा खास प्रधान के नेतृत्व रखा गया।'' राय मेहता पन्नालाल को महकमा खास के पहले प्रधान के रूप में नियुक्त किया गया।

महद्राज सभा (मेवाड़ उच्च न्यायालय) परिषद के अठारह सदस्यों में मेहता राय पन्नालाल एवं उनके छोटे भाई मेहता तखत सिंह भी शामिल थे।

6.12 चित्तौड़गढ़ में विशेष दरबार का आयोजन (सन् 1881 ई.) –

''सन् 1881 में महाराणा सज्जन सिंह को GCSI (Knight – Grand Commander of the Order of the Star of India) का खिताब पुरस्कार स्वरूप मिला जिसके लिए गवर्नर जनरल जॉर्ज रोबिनसन्, दी मर्कुएस्स ऑफ रीपोन चित्तौड़गढ़ आए। उनके सम्मान में विशेष पुरस्कार समारोह के लिए दरबार का आयोजन किया गया। एक समिति का गठन हुआ जिसमें

राजनीतिक एजेंट विंगेट, इंजीनियर मरे एवं मेहता तखत सिंह शामिल थे। आयोजन का मुआयना करने महाराणा डेढ़ महीने पहले चित्तौड़गढ़ पहुँचे।''

चित्तौड़ दरबार के समय का दुर्लभ चित्र

(वि.सं. 1938 ई. सन् 1881)

चित्र में सम्मिलित –

मध्य में सिंहासन पर – महाराणा सज्जनसिंह, महाराणा के दाहिने – शाहपुराधीश नाहरसिंह, सरदारगढ़ ठाकुर मनोहरसिंह, कविराजा श्यामलदास, मेवाड़ के प्रधान 'राय' मेहता पन्नालाल, महाराणा के बायें – बेदला राव तखतसिंह, कानोड़ रावत उम्मेदसिंह, पासोली राव रत्नसिंह, आसींद रावत अर्जुनसिंह, चंवर ढुलाते हुए – फूलनाथ और हुक्मा, बायें तरफ पीछे खड़े – तखतसिंह, रतनलाल और उदयराम पानेरी, दाहिने पीछे खड़े – पुरोहित पद्मनाथ एवं प्राणनाथ

6.13 मेहता तखत सिंह द्वारा बागोर के सकत सिंह के 'नकली' पुत्र के मामले की छानबीन –

शेफर्ड ऑफ उदयपुर और मेहता पन्नालाल की स्वजीवनी जैसे संदर्भ ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि ''जब महाराणा फतेह सिंह को महाराणा सज्जन सिंह का उत्तराधिकारी चुना गया तब राजसी महिलाओं ने फतेह सिंह के सामने शर्त रखी कि अगर कोई भी संतान पुत्र ना हुई तो बागोर के महाराज सकत सिंह के वंशज को मेवाड़ सिंहासन पर आसीन करने का अधिकार होगा। सन् 1887 में महाराणा को जानकारी मिली कि सकत सिंह की दूसरी पत्नि गर्भवती है एवं उन्हें उदयपुर से बागोर ले जाया गया है। इस बात पर महाराणा को अविश्वास था। महाराणा ने सोचा कि सकत सिंह उत्तराधिकारी बनाने हेतु अपनी नकली संतान को आगे लाना चाह रहे हैं।''

महाराणा ने सच की छानबीन करने का निर्णय लिया। उन्होंने कर्नल माइल्स से विचार विमर्श किया और गिरवा के हाकिम मेहता तखत सिंह को ए.जी.जी. कर्नल वॉल्टर से बातचीत करने आबू भेजा। मेहता तखत सिंह के अनुरोध पर महाराणा ने सकत सिंह की पत्नी की डॉक्टरी जाँच करवाने का निर्णय लिया जिसका यह तर्क देकर विरोध किया गया कि इस तरह की प्रक्रिया परिवार की प्रतिष्ठा के प्रतिकूल हैं। उनकी दलील को खारिज कर मिसेस लोनोरगन जो एक प्रमाणित डॉक्टर थीं ने घोषित किया कि सकत सिंह की पत्नि गर्भवती नहीं है।

डॉक्टरी जाँच के तीन हफ्ते बाद सकत सिंह ने घोषित किया कि उनकी पुत्री ने पुत्र को जन्म दिया है। लेकिन महाराणा फतेह सिंह एवं

आवासी कर्नल माइल्स ने स्पष्ट रूप से निर्णय दिया कि सकत सिंह का पुत्र नकली है।

''बागोर के महाराज सकत सिंह का सन् 1889 में निधन हुआ। महाराणा फतेह सिंह ने रियासत को खालसा में जोड़ने का आदेश जारी किया, क्योंकि सकत सिंह का कोई उत्तराधिकारी नहीं था। सोहन सिंह, जिन्हें महाराणा सज्जन सिंह के समय उनके उद्दण्ड व्यवहार के लिए बागोर रियासत से बेदखल कर दिया गया था ने ब्रिटिश सरकार से फतेह सिंह के आदेश का विरोध किया। सकत सिंह की माता एवं दो विधवाओं ने भी सोहन सिंह को समर्थन करते हुए अपनी याचिका भेजी।''

सोहन सिंह के दिए हुए दस्तावेजों की सच्चाई जानने के लिए दरबार ने एक समिति का गठन किया जिसमें छानबीन करने हेतु बेदला के राव तखत सिंह, ठाकुर मनोहर सिंह, प्रधान मेहता राय पन्नालाल, CIE एवं साहिवाला अर्जुन सिंह शामिल थे। छानबीन करने के पश्चात् समिति ने निर्णय लिया की दस्तावेज नकली थे।

6.14 ड्यूक ऑफ कनौट ने फतेह सागर झील एवं जनहित परियोजनाओं की नींव रखीं –

महाराणा फतेह सिंह के शासन काल में प्रधान मेहता राय पन्नालाल अपने पुत्र फतेहलाल के साथ कई ब्रिटिश उच्चाधिकारियों के उदयपुर भेंट के मेज़बान बने। विभिन्न जनहित परियोजनाओं को बढ़ावा देने में प्रधान की महत्वपूर्ण भूमिका का समर्थन एवं भूरि–भूरि प्रशंसा ड्यूक ऑफ कनौट ने की, जैसे –

- सन् 1885 में वॉयसरॉय लॉर्ड डफ़रीन ने न्यू वॉल्टर ज़नाना हॉस्पीटल (वर्तमान में मोती चोहट्टा का आयुर्वेदिक हॉस्पीटल) की नींव रखीं।

- सन् 1889 में राजकुमार ऐल्बर्ट विक्टर ने अपनी दादी एम्प्रेस विक्टोरिया के संगमरमर की मूर्ति का अनावरण गुलाब बाग में किया।

- सन् 1889 में वॉयसरॉय लॉर्ड लेंसडोन ने पब्लिक लाइब्रेरी विक्टोरिया हॉल (वर्तमान में सरस्वती सार्वजनिक पुस्तकालय) का उद्घाटन गुलाब बाग में किया।

- सन् 1889 में कनौट के ड्यूक एवं रानी ने कनौट बांध (वर्तमान फतेह सागर झील की पाल) की नींव रखी। प्रधान मेहता राय पन्नालाल के प्रस्ताव पर 'देवाली का तालाब' के बांध (पाल) की ऊँचाई 20 फीट से बढ़ा दी गई। नींव का पत्थर कनौट के ड्यूक द्वारा रखा गया। बांध (पाल) का नामकरण 'कनौट बांध' हुआ एवं झील का नया नाम 'फतेह सागर झील' रखा गया।

- पिछोला और स्वरूप सागर को फतेह सागर से जोड़ने वाली नहर का सुझाव इंजीनियर थोमसन् ने दिया जो कि पाल की ऊँचाई 20 फीट बढ़ाने की वजह से सम्भव हो पाया। इसे प्रारम्भ में थोमसन् कैनाल के नाम से जाना जाता था।

''सन् 1889 में कनौट के ड्यूक ने उदयपुर यात्रा की। प्रधान मेहता राय पन्नालाल के पुत्र मेहता फतेहलाल, अंग्रेजी भाषा के सुवक्ता होने के कारण प्रतिष्ठित एवं विशिष्ट अतिथियों की आवभगत हेतु प्रोटोकॉल

अफसर के तौर पर नियुक्त किए गए। बेहतरीन आयोजनों के अंतर्गत 'गणगौर की सवारी' का भी आयोजन हुआ।''

6.15 मेवाड़ प्रशासन में सहीवाला अर्जुन सिंह की भूमिका –

1857 के विप्लव के समय की घटनाओं का वर्णन तत्कालीन मेवाड़ राज्य के प्रधान अधिकारी सहीवाला अर्जुन सिंह के जीवन चरित्र[27] में लिखा है कि कैप्टन शावर्स ने नीमच, निम्बाहेड़ा व मन्दसौर को केन्द्र बनाकर मुगल शाहजादा फिरोज एवं उसके साथ मिलकर लड़ने वाले स्थानीय जागीरदारों के बढ़ते प्रभाव से ब्रिटिश सत्ता खतरे में थी, तब शावर्स ने मेवाड़ महाराणा के आदेश पर सहीवाला अर्जुनसिंह, बेदला का रावत बख्तसिंह को सेना व तोपों के साथ निम्बाहेड़ा, नीमच की तरफ भेजा। महाराणा ने चाचा अचलदास व पंचौली हरनाथ जी से सलाह लेकर उदयपुर से एक कम्पनी, दो तोपें, पचास सवार लेकर पचौली दिलीप सिंह व घोटावाला चतुर्भुज को भेजा और हुक्म दिया कि सादड़ी के आस–पास तैनात रहना तथा बागियों के विरूद्ध अंग्रेजों को मदद देना। इस हेतु सादड़ी, कान्हौड़, बांसी, बेगूं, भदेसर, अठाणा, सरवाण्या, दारू, बीनोता और उस जिले के सरदारों को पत्र लिखकर बुलवाया गया। सादड़ी से सिंघवी बहादुरमल जी पहुँचे। अठाणा रावत दीपसिंह व दारू का रावत भवानीसिंह भी जा पहुँचे। चित्तौड़ से सवाईसिंह जी भी सम्मिलित हो गया। सम्वत् 1914 आश्विन कृष्णा एक के दिन उधर नीमच से फौज रवाना हुई, जिसमें जनरल जेक्सन, कर्नल शोर (शावर्स कैप्टन) एवं अन्य ब्रिटिश अधिकारी बागियों के विरूद्ध दोनों ही तरफ से निम्बाहेड़ा की सुरक्षा हेतु गोलन्दाजी करने लगे। एक तरफ शाहजादा फिरोज व निम्बाहेड़ा का वृद्ध तारा पटले इत्यादि थे, दूसरी तरफ ब्रिटिश सेना एवं उसके साथ मेवाड़ की सेना संयुक्त थी, फलतः निम्बाहेड़ा से बागी भाग

निकले, परन्तु इस घटना में तारा पटेल को बागियों का साथ देने व विप्लव में ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध क्रान्ति में सहयोग देने की उसे सजा दी।[28]

सहीवाला का जीवन चरित्र पृष्ठ 63 पर लिखा है कि कैप्टन शावर्स ने 1857 की बगावत की घटना के समय मुगल शाहजादा फिरोज व निम्बाहेड़ा के बक्शी को भगा देने का आरोप निम्बाहेड़ा के पटेल ताराचन्द पर लगाकर उसे तोप से उड़ा देने का आदेश दिया।[29] मिसिंग चैप्टर ऑफ म्यूटिनी नामक पुस्तक में स्वयं कैप्टन शावर्स ने निम्बाहेड़ा के पटेल को परेड़ ग्राउण्ड में तोप के सम्मुख खड़ा कर उड़ा दिया। यह कार्य उसने शेष बागियों में भय पैदा करने की रोमन कार्यवाही की। यद्यपि सहीवाला अर्जुनसिंह ने इस विभत्स्य घटना (तारा पटेल को अपराधी ठहराकर तोप से उसका वध करने के आदेश) को रोकने का पूरा प्रयत्न किया, इसके साथ मेहता फूलचन्द, सवाईसिंह तथा कानोड़ के पन्ना लाल बाबेल ने भी कप्तान शावर्स को ऐसा गम्भीर अपराधी नहीं मानकर उसके मृत्युदण्ड के आदेश को रोकने की सिफारिश की किन्तु ब्रिटिश अधिकारी शावर्स ने किसी की बात को नहीं सुन अन्त में उसे निश्चित दिवस पर निम्बाहेड़ा के ब्रिटिश सैन्य परेड ग्राउण्ड में तोप से बांधकर उड़ा दिया। ब्रिटिश सरकार की तरफ से निम्बाहेड़ा को बागियों से मुक्त कराने की विजय से प्रसन्न होकर शावर्स की तरफ से महता फूलचन्द को 200 रूपये व पैदलों को 10 रू., सवारों को 15 रूपये, कामदारों को 50 रू. से 150 रू. तक इनाम दिया।[30]

150 रू. महता जी के कामदार कुन्दनलाल जी पंचोली चित्तौड़ वाले को, 150 रू. सहीवाला अर्जुनसिंह के कामदार खुशहाल सिंह को, 50 रू. रोशन लाल नायब को, 100 रू. सहीवाला अर्जुनसिंह के हथनी के महावत को तथा 50 रू. महता जी की हथनी गुमानी के महावत इलाबक्श को दिये गए। बेगूं रावत को 200 रू. कलदार जमलावदा के पटेल रामसिंह को 1200 रू.

कलदार, केसूंदा के पटेल केरिंग को 1200 रू. व केसूंदा के हाकिम पण्डित जादवराव को 1200 रू. सरकार से मिले व दोनों पटेलों को महाराणा मेवाड़ से कड़े व सरोपाव, बारह बीघा जमीन मिली।[31]

6.16 1857 का जननायक ताराचन्द पटेल[32] एवं तात्याटोपे की मेवाड़ ब्रिटिश सत्ता के विरोधी गतिविधियाँ –

मन्दसौर में फकीर के वेश में निर्वासित शाहजादे फिरोज के पक्षधर प्रसिद्ध क्रान्तिकारी तात्याटोपे का भी मन्दसौर से सम्बन्ध है। वह इस प्रकार कि जब तात्याटोपे व उनके साथी राव साहब ने गुजरात से आगे बढ़कर बांसवाड़ा छोटी राजपूत स्टेट में प्रवेश किया। बाँसवाड़े से दोनों नेता मेवाड़ की ओर बढ़े। मेवाड़ सलूम्बर के सामन्त के नेता को कुछ रसद दी और तात्या अपने पहले के कार्यक्षेत्र भीलवाड़े में से होता हुआ प्रतापगढ़ पहुँचा। यह भी एक राजपूत रियासत थी; शत्रु भी उसका पीछा बराबर कर रहे थे। शत्रु की फौज ने उसे हर तरफ से घेर रखा था। प्रतापगढ़ से वह मन्दसौर भागा और मन्दसौर से जीरापुर होता हुआ नाहरगढ़ गया। यह 1859 का साल था। नाहरगढ़[33] में वह अपने नये सहायक व मित्र मानसिंह से मिला। विपत्तियों ने ही केवल इन दो अपरिचित व्यक्तियों को एक साथ मिलाया था, परन्तु भाग्य में कुछ और ही लिखा था। तात्याटोपे का यही मानसिंह मित्र तात्याटोपे की मृत्यु का कारण बना। वह इस प्रकार कि सन् 1859 के अप्रेल मास में मानसिंह[34] ने तात्याटोपे को धोखा दिया। जनरल बेपियर ने मेजर मीड़ को पारो के जंगलों को साफ करके सड़क बनाने का काम सुपुर्द किया था। मानसिंह ने 2 अप्रेल को मीड़ के शिविर में आत्मसमर्पण किया और अपने नये अंग्रेज मित्रों को प्रसन्न करने के लिए उसने अपने मित्र तात्याटोपे को पकड़वा देने का आश्वासन दिया। वह जंगल के गुप्त कोनों से परिचित था। एक छोटा–सा सैन्यदल मानसिंह के सुपुर्द किया गया। मानसिंह के आदेश से

सिपाही एक छोटे–से गड्ढ़े में छिप गये जहां वह और तात्याटोपे अक्सर जाया करते थे। वह तात्या को वहां ले आया। आधी रात तक बातचीत करता रहा। अन्त में जब तात्या सो गया तो मानसिंह अपने सिपाहियों को ले आया। दो रसोइये जो तात्या के साथ वे घबड़ा कर भाग गये। तात्याटोपे पकड़ लिया गया। उसके हाथ स्वयं मानसिंह ने पकड़ रखे थे। 15 अप्रेल की तात्या के विरूद्ध सैनिक न्यायालय में देशद्रोह का मुकदमा चलाया गया। परिणाम पहले से निश्चित था। तात्या को शिवपुरी[35] के समीप फाँसी दे दी गई। मन्दसौर से सम्बन्धित दोनों वीरों का अन्त इस प्रकार हुआ।

1857 की क्रान्ति जिसको ब्रिटिश अधिकारियों ने एक सैनिक विप्लव कहा है, परन्तु स्वयं ब्रिटिश प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा लिखित पुस्तकों, पत्राचारों और तत्कालीन पुलिस और सैन्य अदालतों तथा खुफिया रिकॉर्डस् के साथ भारतीय राष्ट्रीय अभिलेखागार में उपलब्ध प्रामाणिक दस्तावेजों के साथ–साथ मेवाड़, मालवा और मध्य भारत तथा गुजरात स्थित बड़ौदा के अभिलेखों से ज्ञात होता है कि यह भारत का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम था।

पाद टिप्पणियाँ –

1) अ) गोपाल वल्लभ व्यास, अप्रकाशित शोध प्रबन्ध ''18वीं व 19वीं सदी में मेवाड़ के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन के कतिपय पक्ष'', पृष्ठ 153–156 एवं कायस्थ वर्ग, पृष्ठ 157 से 158, प्रशासनिक घरानों में कोठारी, मेहता, गाँधी, गलूण्डया व बापना का प्रमुख स्थान था।

ब) सोसियल लाईफ इन मेडिवल इण्डिया, जी. एन. शर्मा पृष्ठ 90 व कोठारी बलवन्त सिंह का जीवन चरित्र, पृष्ठ 34–36 व 135–136

2) अ) गोपाल वल्लभ व्यास, उपरोक्त, वही, पृष्ठ 157–160

ब) बक्शीखाना रिकॉर्ड, पट्टा बहियाँ वि.सं. 1901–1904, 1908–1919, 1926, 1933–35 बस्ता 1 से 3 एवं 6 वि.सं. 1930 री टिप्पणी रोजानारी

3) मेवाड़ के प्रसिद्ध घराने – उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग 2, पृष्ठ 997–99, 1005–6, 1010–11, 1014–15, 1020–21, 1030–32

4) सहीवाला भाग 1, पृ. 61, कोठारी बलवन्त सिंह जीवन चरित्र, पृष्ठ 3, वीर विनोद पृष्ठ 939, 1561–62, 1699, 1708–09, 1933–34, 1943, 1950–53, 2220–21, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग द्वितीय, पृष्ठ 612, 651–59, 673, 748

5) अ) बक्शीखाना रिकॉर्ड, पट्टा बहियाँ, पट्टा बहियाँ, वि.सं. 1901–1904, 1908–1919, 1926, 1933–35, बस्ता संख्या 1 से 3 तक, गोपाल वल्लभ व्यास, उपरोक्त, वही, (अ.शो.प्र.) पृष्ठ 155–162

ब) उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग 2, पृष्ठ 998–999 व 1701 देखें अठारहवीं उन्नीसवीं शताब्दी के सामाजिक, आर्थिक जीवन के कतिपय पक्ष (पी.एच.डी. शोध अप्रकाशित, डॉ. गोपाल वल्लभ व्यास, पृष्ठ 139–40 व 1028–29)

6) औझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग द्वितीय, पृष्ठ 787–88, 814 एवं श्यामलदास वीर विनोद, भाग 2, पृष्ठ 1714

7) मेवाड़ मराठा सम्बन्ध, अ. प्र. शोध प्रबन्ध (डॉ. गिरीशनाथ माथुर), पृष्ठ 40–46

8) उपरोक्त, वही, पृष्ठ 54–60

9) औझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग प्रथम, पृष्ठ 956 से 963

10) औझा, उपरोक्त, वही, भाग प्रथम, माधव राव की उदयपुर पर चढ़ाई व ठाकुर अमरचन्द बड़वा का प्रधान बनना, पृष्ठ 963 से 972

11) वीर विनोद, भाग द्वितीय, पृष्ठ 1550, टॉड राजस्थान, जिल्द 1, पृष्ठ 500–503 एवं औझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग प्रथम, पृष्ठ 958 से 960

12) वीर विनोद, उपरोक्त वही भाग द्वितीय, पृष्ठ 1691

13) महाराणा अरिसिंह का पत्र शाह मोतीराम बोल्या के नाम वि.सं. 1822 वर्षे फागुण वदी 12 गुरूवार इस पत्र में मेवाड़ पर मराठा आक्रमणों का मुकाबला करने हेतु नियुक्त ठाकुर अमरचन्द बड़वा के आदेशानुसार सैन्य ठिकानों का प्रबन्ध करने के निर्देश हैं।

14) महाराजाधिराज महाराणा अरिसिंह जी आदेशातु गोढ़वाड़ के समस्त ठाकुरों को निर्देशित पत्र वि.सं. 1823 वर्षे पोष सुदी 12 रविवार का इस पत्र में भी प्रधानमंत्री अमरचन्द बड़वा के नेतृत्व में और उसके कहे अनुसार मराठों के मेवाड़ आक्रमण का मुकाबला करने हेतु गोढ़वाड़ क्षेत्र की रक्षा करने की आज्ञा दी गई है।

15) पत्र अरिसिंह के द्वारा प्रेषित – शाह मोजीराम बोल्या के नाम का वि.सं. 1823 वर्षे चेत सुदी 10 बुद्धे मराठों के साथ सैन्य संघर्ष में सेना को वेतन भुगतान हेतु प्रेषित रूपये 5000 का उल्लेख हुआ है। अमरचन्द बड़वा की सैन्य व प्रशासनिक दक्षता का यह पत्र व ऐसे बोलिया घराने से प्राप्त (येवन्ती कुमार बोल्या के संग्रह से) अप्रकाशित बही में पढ़ने को मिले हैं।

16) टॉड; रा; जि. 1, पृ. 528। वीर विनोद; भाग 2, प्रकरण 15, पृ. 126

17) वीर विनोद; भाग 2, प्रकरण 15

18) टॉड; रा; जि. 1, पृ. 529–30

19) वही;जि. 1, पृ. 528–29

20) टॉड; रा; जि. 1, पृ. 531

21) वही; टॉड; रा; जि. 1, पृ. 530–31। वीर विनोद; भाग 2, प्रकरण 15, ख्यात।

22) रा; जि. 1, पृ. 531–32।

23) उद्धृत, पं. गौरीशंकर हीराचन्द औझा, उदयपुर राज्य का इतिहास, पृष्ठ संख्या 1001–1007

24) 'रङ्गड़' राजपूतों के लिए अपमान सूचक शब्द है।

25) टॉ; रा; जि. 1, पृष्ठ 532–35

26) टॉ; रा; जि. 1, पृष्ठ 535–41। वीर विनोद; भाग 2, प्रकरण 15

27) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र, पृ. 64–68

28) शावर्स, ए मिसिंग चैप्टर ऑफ दी इण्डियन म्यूटिनी, पृ. 128–29

29) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र, पृ. 57–58

30) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र, पृ. 62–64

31) सहीवाला अर्जुनसिंह का जीवनचरित्र, पृ. 65–67

32) पोलिटिकल डिपार्टमेन्ट वो. 51, सन् 1857, पृष्ठ 473–479, सेन्ट्रल रिकॉर्ड, ऑफिस बड़ौदा

33) शावर्स, ए मिसिंग चैप्टर ऑफ दी इण्डियन म्यूटिनी, पृ. 119–32

34) उपरोक्त, ए मिसिंग चैप्टर ऑफ दी इण्डियन म्यूटिनी, देखें वही, पृ. 114–16

35) शावर्स, ए मिसिंग चैप्टर ऑफ दी इण्डियन म्यूटिनी, देखें वही, पृ. 133–144

परिशिष्ट 1 – मेवाड़ के प्रधान बोलिया घराने का अभिलेख

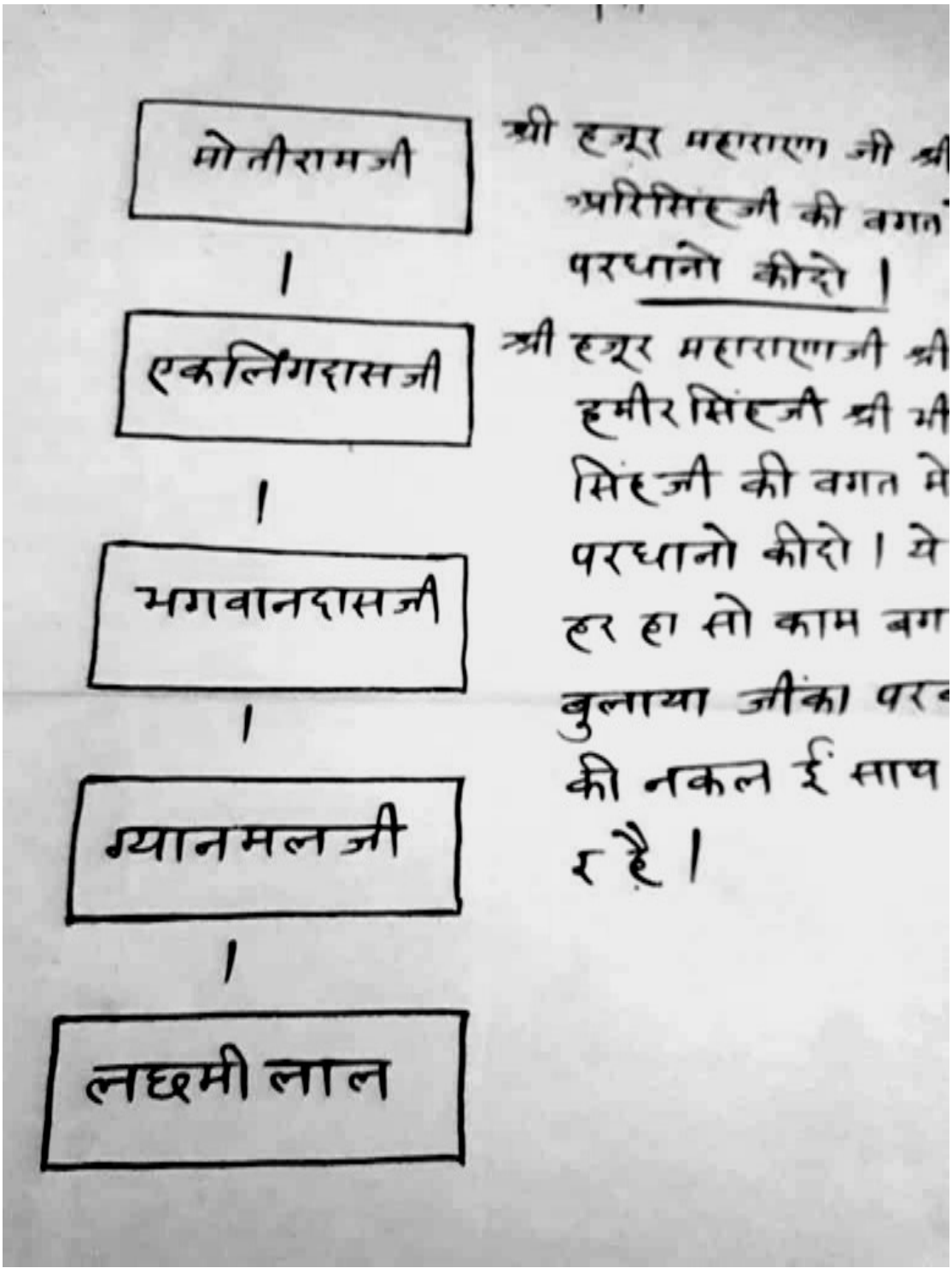

परिशिष्ट 2 – महाराणा अरिसिंह का शाह मोतीराम बोलिया के नाम ओदश पत्र (मराठा आक्रमणों से मेवाड़ की रक्षार्थ)

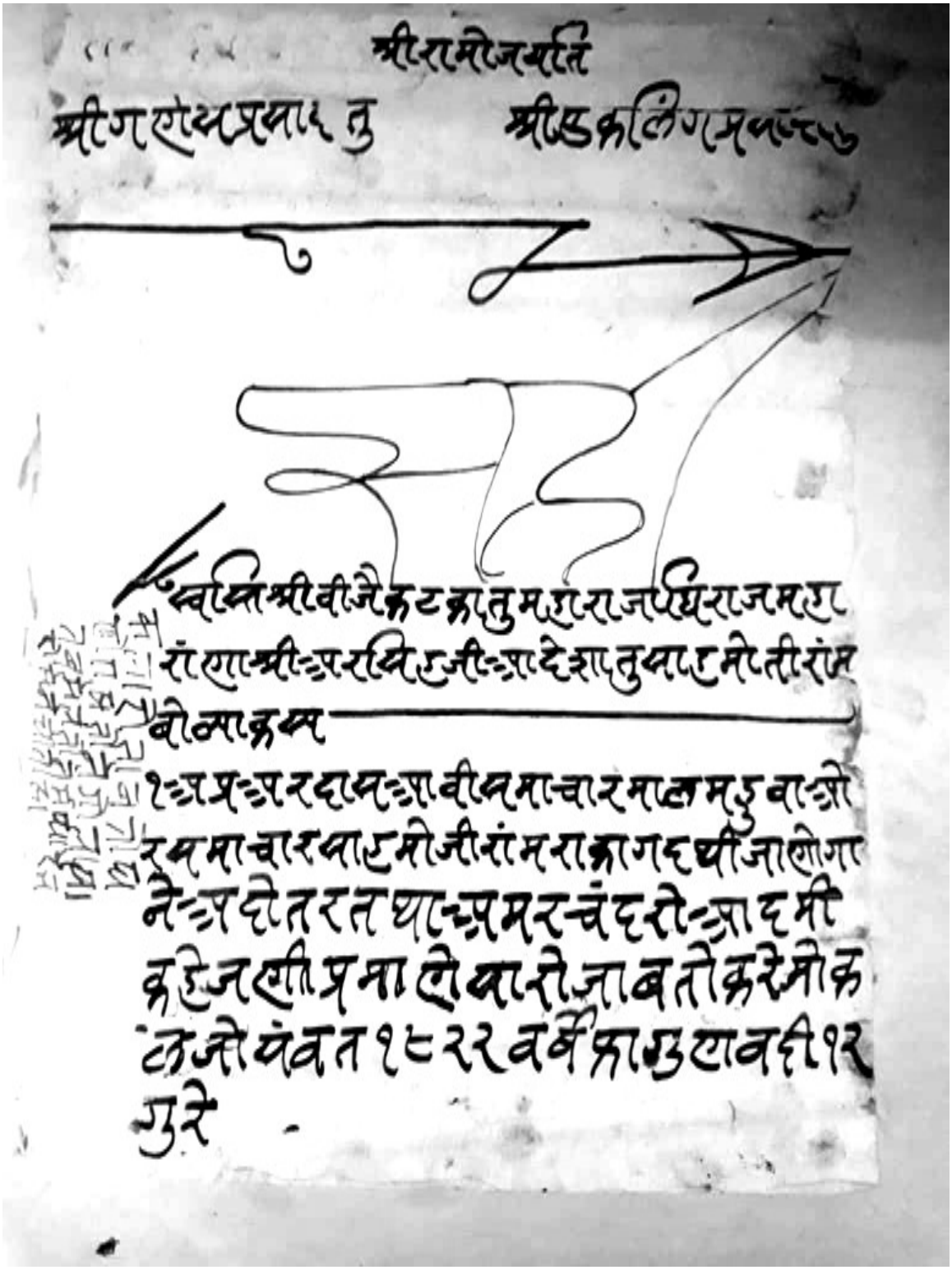

परिशिष्ट 3 (अ) – महाराणा मेवाड़ चेरिटेबल ट्रस्ट, सिटी पैलेस, उदयपुर से प्राप्त वंशावली

परिशिष्ट 3 (ब) – मेवाड़ का राजवंश एवं राजघरानों की तालिका

महाराणा संग्रामसिंह से मेवाड़ महाराणा भूपालसिंह जी तक का वंशवृक्ष एवं राजघरानों की तालिका

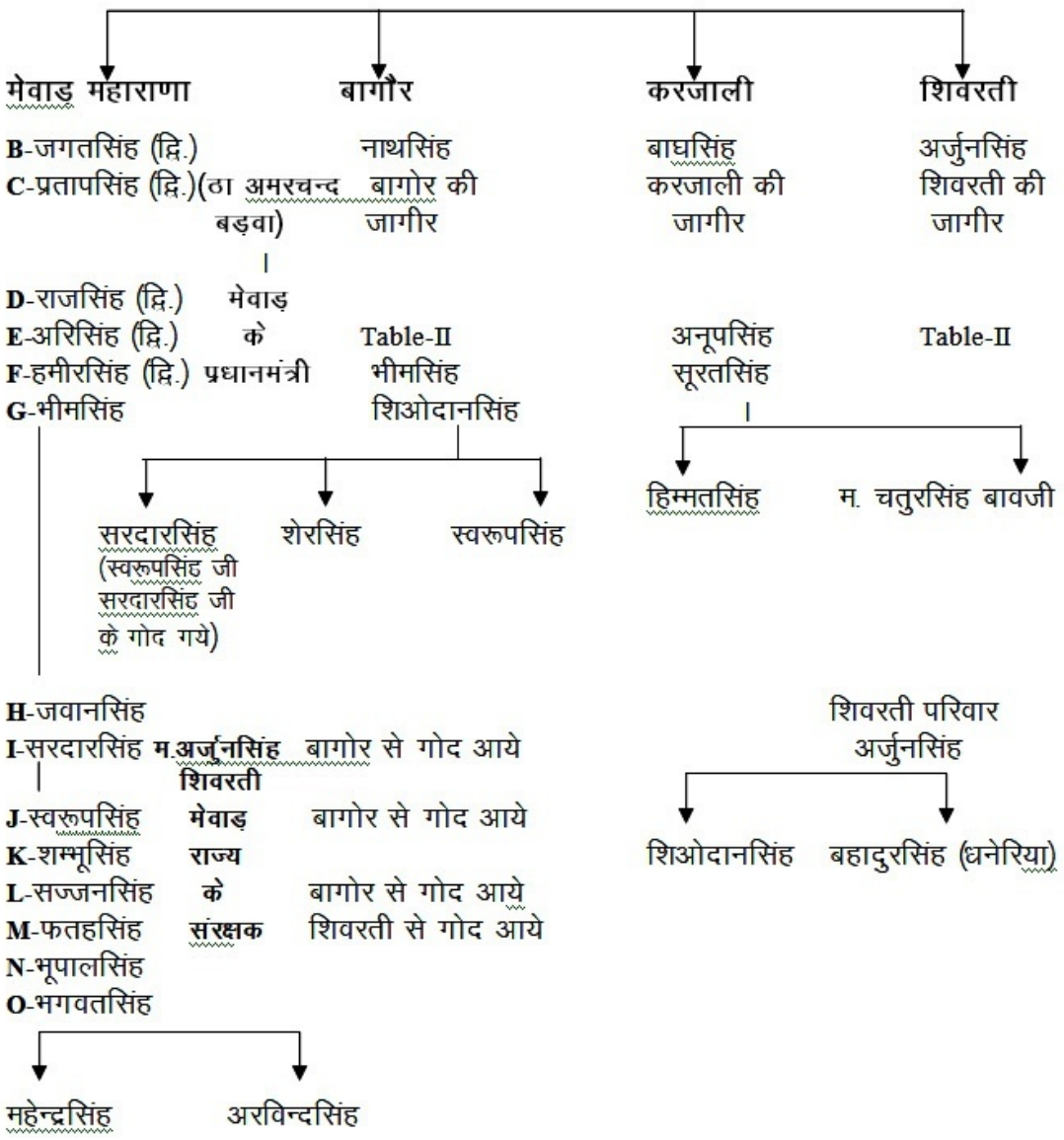

परिशिष्ट 3 (स) – मेवाड़ का राजवंश एवं राजघरानों की तालिका

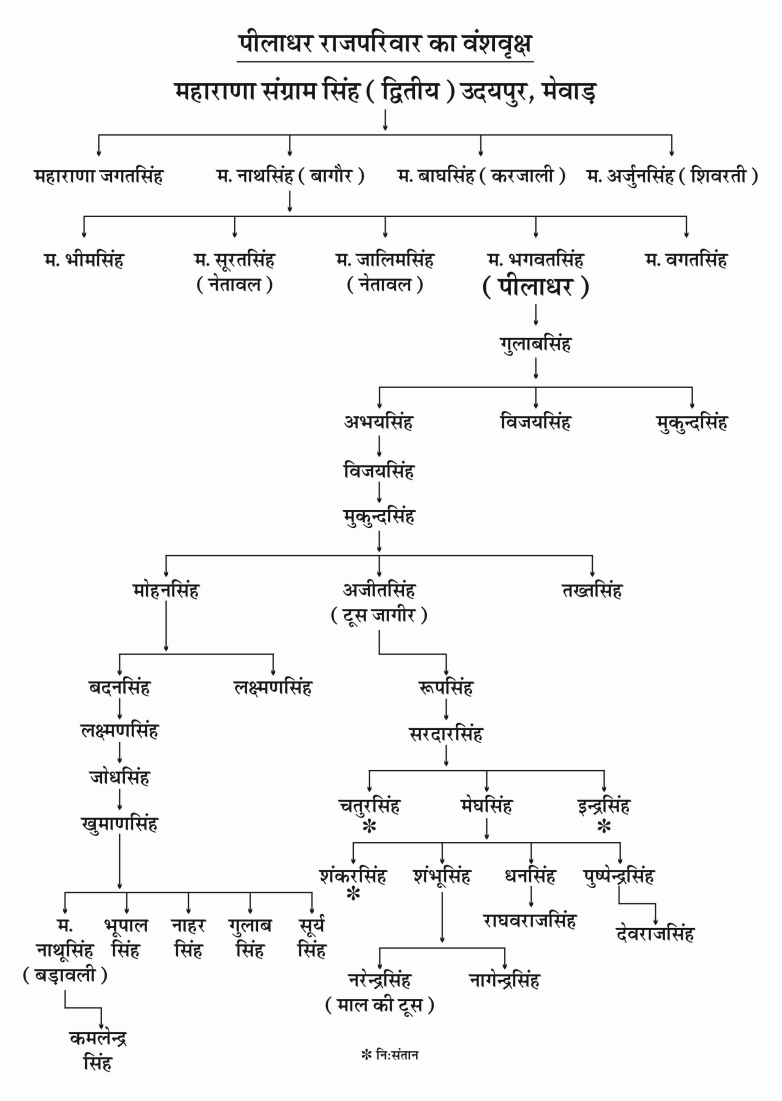

1) लेखक कर्नल वॉल्टर (मेवाड़ रेजीडेन्ट) :– बायोग्राफिकल स्केचीज ऑफ द मेवाड़, उद्धृत – उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग 1, गौ.ही. ओझा, पृ. 969

2) लेखक सी. एस. बेले (सन् 1908 ई.) :– द रूलिंग प्रिंसेस, चीफ्स एण्ड लिडिंग परसोनेजेज़ इन राजपूताना एण्ड अजमेर। यह पुस्तक गर्वनर जनरल के आदेश से ए.जी.जी. जी.एच. ट्रेवरर्स रिपोर्ट (सन् 1879) पर आधारित।

3) **सन्दर्भ** :– डॉ. जी. एल. मेनारिया निदेशक, तक्षशिला विद्यापीठ संस्थान एवं डॉ. अजातशत्रु सिंह शिवरती निदेशक, शिवरती शोध संस्थान, उदयपुर से प्राप्त उपरोक्त वंशावली।